: तृ ती य   अ ध्या य :

यशपाल की उपन्यास- साधना

एक परिचय

तृतीय अध्याय

यशपाल के उपन्यास : एक परिचय

उपन्यास : अर्थ और परिभाषा --

उपन्यास शब्द की निष्पत्ति उप + नि + आस + अच् धातु तथा प्रत्यय आदि के योग से हुई है, जिसका व्युत्पत्तिगत अर्थ "समीप में रखना" है।

अमर कोश में इस शब्द की परिभाषा इस प्रकार है, " उपन्यास: प्रसादनम् " इस का अर्थ - उस रचना से है जो मानव आत्मा को प्रसादित, आनंदित करें।

आज उपन्यास से अभिप्राय बृहद् आकार के उस गद्य आख्यान अथवा वृत्तान्त से है जिसके अंतर्गत वास्तविक जीवन के प्रतिनिधित्व का दावा करनेवाले पात्रों और कार्यों का चित्रण किया जाता है।

अंग्रेजी में १७ वीं शताब्दी में प्रथम इस साहित्य-प्रकार के लिए [नाविल] यह शब्द पर्याय के रूप में उपयुक्त होने लगा। [Novel] नाविल यह शब्द इतालियन "नावेला" से निकला है, जिसका अर्थ, उपन्यास वह रचना है, जिसमे आधुनिकता और सत्य दोनें की प्रतिष्ठा है।

प्रसिध्द अंग्रेजी साहित्यकार, " एच.जी. वेल्स " - उपन्यास एक रिक्त मस्तिष्क और रिक्त समय के लिए उपयोगी मनोरंजन की वस्तु है।" [

]

बाबू श्यामसुन्दर दास --

"उपन्यास मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा है।"

प्रेमचंद —

" मैं उपन्यास को मानव जीवन का चित्र-मात्र समझता हूँ।

मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्य को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है। "

डॉ. भागीरथ मिश्र —

युग की गतिशील पृष्ठ भूमि पर सहज शैली में स्वाभाविक जीवन की एक पूर्ण व्यापक झाँकी प्रस्तुत करनेवाला कद्य-काव्य उपन्यास कहलाता है।

उपन्यास आज के जीवन की सर्वाधिक लोकप्रिय विधा है। उपन्यास भारतीय देन है, अथवा पाश्चात्य इसमें पर्याप्त मतभेद हैं। उपन्यास चूँकि मानव जीवन से संबध्द विधा है, उसके बीज भी मानव के प्राचीन विकास में पाये जाते है।

उपन्यास का उद् भव —

भारतीय संस्कृति के प्रति अगाध निष्ठा रखनेवाले विद्वान हिन्दी उपन्यास का आधार " ऋग्वेद " में पाये जानेवाले "यम-यमी", "पुरूखा-उर्वशी" के संवादों को मानते है। ये विद्वान सभी आख्यान काव्यों को [रासो काव्य] हिन्दी उपन्यास की पृष्ठभूमि बतलाते हैं। इतना होकर भी वस्तु स्थिति मात्र कुछ भिन्न सी लगती है।

हिन्दी में उपन्यास शब्द बंगाली से आया। भारतेंदु युग में प्रथम बार हिन्दी में बंगला के प्रतिष्ठित उपन्यासकार बंकिम चंद्र, रमेश दत्त, चण्डीशरण सेन आदि के उपन्यासोंका अनुवाद किया गया तथा कुछ मौलिक उपन्यास भी लिखे गये। ऐसी स्थिति में यह मान लेना अधिक तर्कसंगत प्रतीत होता है कि हिन्दी में उपन्यासों का वास्तविक प्रारंभ भारतेंदु हरिश्चंद्र के समये से ही हुआ।

हिन्दी उपन्यास - साहित्य के विविध विकास सोपान --

हिन्दी उपन्यास - साहित्य का इतिहास एक ही शताब्दी का है। इस काल में प्रेमचंद को केंद्र बिंदु मानकर हिन्दी उपन्यास - साहित्य के विकास के तीन सोपान माने जाते हैं।

१ : प्रेमचंद पूर्व काल [भारतेंदु हरिश्चंद्र युग]
सन १८८२ से १९१८ तक.

२ : प्रेमचंद काल [विकास युग]
सन १९१९ से १९३६ तक.

३ : प्रेमचंदोत्तर काल [आधुनिक काल]
सन १९३६ से आज तक.

१ : प्रेमचंद पूर्व काल -- १८८२ से १९१८ तक --

बहुसंख्य विद्वानों की मान्यता है कि लाला श्रीनिवास दास का "परीक्षा गुरु" हिन्दी का सर्व प्रथम मौलिक उपन्यास है। किन्तु आचार्य रामचंद्र शुक्लजी ने पंडित श्रध्दाराम फुल्लौरी रचित "भाग्यवती" को हिन्दी का सर्वप्रथम उपन्यास माना है। [सन १८७७] जो भी हो हिन्दी के प्रारंभिक युग में हिन्दी उपन्यास क्षेत्र में मौलिक उपन्यासों की उपेक्षा तिलस्मी, ऐयारी, जासूसी, और साहसिक उपन्यास लिखे गये। अंग्रेजी और बंगला उपन्यासों के अनुवाद भी इस काल में लिखे गये। पंडित बालकृष्ण भट्ट, पं. देवीप्रसाद शर्मा, कार्तिक प्रसाद, प्रताप नारायण मिश्र, बंकिमचंद्र उपाध्याय, रामकृष्ण वर्मा, गोस्वामी राधाचरण, देवकीनंदन खत्री, किशोरीलाल गोस्वामी, गोपालराम गहमरी, भारतेंदु हरिश्चंद्र आदि उपन्यासकारोंने इस काल में उपन्यास में

चमत्कृति, जासूसी, युध्द , उन्मत्त वासना, शरीर सौंदर्य का खुलकर वर्णन किया है। प्रोफेसर प्रवीण नयक ने इस काल को " टेक्निक और कला की दृष्टि से अविकसित किन्तु प्रयत्न की दृष्टि से विशेष सराहनीय काल " [१] माना है। इस प्रकार इस काल में उपन्यासकारों का मुख्य ध्येय पाठकों का मनरंजन, तिलस्मी, जासूसी, कहानियों और निम्न कोटि के प्रणय व्यापरों व्दारा करना ही था। इस काल में एक भी अच्छे और मौलिक उपन्यास का प्रणयन नहीं हो सका।

२ : प्रेमचंद काल [विकास युग] १९१९ से १९३६ तक ---

हिन्दी उपन्यास का वास्तविक उत्थान १९१५ में प्रमचंद के आगमन के पश्चात् ही हुआ। पुराने विषय और टेक्निक की अपेक्षा प्रमचंद के उपन्यासें में मानव - जीवन का यथार्थ चित्र होने के कारण ये उपन्यास समाजाभिमुखी रहें। प्रेमचंद ने मानवतावादी दृष्टिकोण के साथ साथ समाज के वास्तविक चित्रों को भी स्पष्ट किया है। उनके यथार्थ पात्र आदर्श के लिए बलिदान करनेवाले हैं -- जैसे - गोदान के होरी , कर्मभूमि के सूरदार। प्रेमचंद के आगमन के पूर्व हिन्दी उपन्यास जो निसांद पडा हुआ था, प्रमचंद के आते ही उसमें चैतन्य का संचार हुआ। उसमें प्रौढता आयी। मानव जीवन की गंभीर आलोचना करने में वह सक्षम हुआ। "रूठी रानी ", "वरदान", "प्रतिज्ञा", "सेवा सदन ", "प्रमाश्रम", "निर्मला", "कायाकल्प " , " रंगभूमि ", "गबन " , कर्मभूमि", "गोदान", "मंगल सूत्र", आदि उपन्यासों में प्रमचंद ने

---

१ यशपाल का औपन्यासिक शिल्प : प्रो. प्रवीण नायक : पृ. ३

समाज की रूढिवादिता, झूठा नैतिकवाद, विधवाओं की समस्या, वेश्या समस्या, ग्राम्य जीवन में किसान और जमींदार के संबंध, मध्यमवर्गीय जीवन, ग्रामसुधार आदि पर तीव्र प्रकाश डाला है, और आदर्शवाद को अपनाया है। मनरंजन के साथ साथ मानव जीवन की व्याख्या यही उनका ध्येय रहा है।

इसी युग में जयशंकर प्रसाद भी अपने तीन उपन्यास, "कंकाल", "तितली", तथा "इरावती" के साथ आपने आदर्शवाद का झंडा फहराते रहे हैं। प्रसाद ने मंदिर के ढोंगी पुजारी, और भारतीय स्त्रियोंकी असहाय स्थिति का सुंदर चित्रण किया हैं।

इस प्रकार उपन्यास सम्राट प्रेमचंदने उपन्यासोंमे सुधारवादी दृष्टि को अपनाया, जिस का अनुसरण, "उग्र", "आ. चतुरसेन शास्त्री" "प्रतापनारायण श्रीवास्तव", "भगवतीचरण वर्मा" तथा "वृन्दावनलाल वर्मा" आदि उपन्यासकारो ने करके इस धाती को आधुनिक युग के सुपूर्द किया।

३: प्रेमचंदोत्तर काल - [आधुनिक युग] १९३६ से आज तक ---

प्रेमचंद के बाद जो उपन्यास लिखे गये, उन में विभिन्न प्रवृत्तियाँ उभरकर आयीं। अत: प्रेमचंदोत्तर काल में इन प्रवृत्तियोंको आधार मानकर ही उपन्यासोंका विभाजन किया जा सकता है। ये नयी प्रवृत्तियाँ विदेशों से आयी और भारत में विकसित हुओ।

अ] सामाजिक उपन्यास --

प्रेमचंदोत्तर काल में इस कोटि के प्रमुख उपन्यासकार "सियारामशरण गुप्त", "विश्वंभरनाथ कौशिक", "अमृतलाल नागर" और "फणीश्वरनाथ रेणु" है।

"सियाराम शरण गुप्त " के "गोद" "अंतिम आकांक्षा" "नारी" आदि उपन्यास भारतीय संस्कृति की महानता बताते हैं।

"कौशिक" के " माँ ", "भिखारिणी " आदि उपन्यासों की कहानी समाज के पथभ्रष्ट पक्षों की दर्दनाक कहानी है।

"अमृतलाल नागर" के "महाकाल" में बंगाल के अकाल का यथार्थ वर्णन है, तो "बूँद और समुद्र " मानव की मर्यादा आँकने में समर्थ हो गया है।

"फणीश्वरनाथ रेणु" के " मैला आँचल" ने तो हिन्दी उपन्यास क्षेत्र में एक नये अध्याय का उपोद्घात किया है। हिन्दी में आँचलिकता के लाने का श्रेय सर्वप्रथम रेणुजी को ही है। " श्रीलाल शुक्ल" "राही मासूम रज़ा" इस आँचलिक धारा के प्रमुख उपन्यासकार रहे हैं।

ब) व्यक्तिवादी उपन्यास --

इन उपन्यासों में व्यक्तिगत जीवन, घटना, व्यक्तिगत चरित्र, व्यक्तिगत मनो-विज्ञान या व्यक्तिगत समस्या का निरूपण रहता है।

"भगवती प्रसाद बाजपेयी " के "पतिता की साधना", "दो बहने ", "उपेन्द्रनाथ अश्क" जी के "गिरती दीवारें " "गर्म राख", "बड़ी बड़ी आँखें", "सितारों के खेल", "एक नन्ही सी किन्दिल" आदि उपन्यास तथा

रामेश्वर शुक्ल "अंचल" के " चढ़ती धूप", "नयी इमारत", "उल्का" और " मरु-प्रदेश" आदि उपन्यासों में व्यक्तिगत सुख दुख की झाँकी ही दीख पडती है।

उषादेवी मित्रा -- "वचन का मोल", "विथा" , "जीवन की मुस्कान", "नष्ट नीड" आदि उपन्यासों में नारी की स्वतंत्रता का स्वर स्पष्ट है।

लक्ष्मीनारायण लाल -- "धरती की आँखें", "बया का घोसला" और "साँप" आदि उपन्यासोंमें ग्रामीण जीवन का चित्रण व्यक्तिगत चेतना को समहित किये हुअे दीख पडता है।

क] समाजवादी उपन्यास —

प्रगतिवादी अथवा समाजवादी उपन्यासों का मूल आधार वह समाजवादी चेतना है, जो आदर्शवाद से निकलकर यथार्थवाद की ओर अग्रसर हुयी है। इसे मार्क्सवादी धारा भी कहते है। इस में मार्क्सवादी विचारधारा के अनुसार व्यक्ति को समाज के माध्यम से देखा और परखा जाता है। मार्क्स वाद के अनुसार समाज के दो वर्ग, शोषक और शोषित इस समाजवादी उपन्यास के प्रमुख आधार होते है। शोषित वर्ग की समस्याओं, कठिनाइयों और दु:खों को स्वर देना और उनके राज्य की कल्पना करना इस धारा के उपन्यासकारों का प्रमुख लक्ष्य रहा है। इस प्रकार मार्क्सवाद ने जब साहित्य में प्रवेश किया तब वह समाजवाद बनकर आया। समाजवादी उपन्यासें में रूढी, जाति, पंथ, विभेद आदियों के प्रति प्रकट विरोध, सामाजिक विषमता और संघर्ष का चित्रण मिलता है। "यशपाल", "नागार्जुन" "भैरवप्रसाद गुप्त" "रांगेय राघव", "राजेंद्र यादव", आदि इस धारा के प्रमुख उपन्यासकार है।

यशपाल -- हिन्दी उपन्यास साहित्य में सर्वप्रथम विशुध्द रूपमें मार्क्सवाद को लाने का श्रेय यशपाल को मिलता है। "दादा कामरेड", "देश द्रोही ", "झूठा-सच", "मनुष्य के रूप", "पार्टी कामरेड", "क्यों फँसे", "मेरी तेरी और उसकी बात", आदि यशपाल के श्रेष्ठ समाजवादी उपन्यास है।

अ – किसी को लांघकर अथवा किसी को अभिभूत करके उससे आगे बढ़ने या उसपर विजय प्राप्त करने की क्रीया का भाव।

ब – राजनीति में वह स्थिति जिस में विद्रोहियों ने सफलता पूर्वक शासन की बागडोर अपने हाथों मे ले ली हो।

क – कोई ऐसा बहुत बडा परिवर्तन जिससे किसी चीज का स्वरूप बिल्कुल बदल जाए। " [१]

२. " क्रान्ति" यह संस्कृत शाब्द है। इसका अर्थ है – "डग भरने की क्रिया, कदम रखना, एक स्थान से दूसरे स्थानपर गमन, एक दशा से दूसरी दशा में परिवर्तन, फेरफार, उलटफेर। " [२]

३. क्रान्ति को अंग्रजी में " Revolution " कहते है। 'Revolution' की परिभाषा एक अंग्रजी ग्रंथ में इस प्रकार है, " Revolution in its most common sense is an attempt to make a radical change" " अर्थात किसी मूलगामी परिवर्तन के लिए किए गये मानवी प्रयत्नों को साधारण अर्थ में क्रान्ति कहते है। " [३]

४. आधुनिक राज्य शास्त्रीय अर्थ के अनुसार " Revolution " शाब्द का प्रथम प्रयोग इटली की " सिटी स्टेटस " राज्य पध्दति में मध्ययुगीन काल में " आकस्मिक सुधार " [Enclesiustical Reforms] के रूप में हुआ।

- -

१. मानक हिन्दी शाब्द कोश – संपादक रामचंद्र वर्मा – प्रथम खंड : प्रथम संस्करण – पृष्ठ ६०४
२. हिन्दी शाब्द सागर खंड २ श्याम सुंदर दास पृष्ठ १०८५ संस्करण १९६.
३. International Encyclopedia of Social Sciences : Volum 13 & 14 : Page. 501 : संस्करण १९७२

५. १६०० ई. में यह शब्द अंग्रजी संसद भावन में, विरोधात्मक अर्थ में, अर्थात पुराने नियमों की जगह नये नियमों की पुन:स्थापना करना प्रथम बार प्रयुक्त हुआ।

क्रान्ति को उपरोक्त सभी परिभाषाओं में "परिवर्तन" का संकेत मिलता है। इस प्रकार क्रांति "सामाजिक परिवर्तन" का मूल साधना है। अन्यायपर अवलंबीत वर्तमान समाज व्यवस्था में परिवर्तन करना क्रांनि का हेतु रहता है। सरदार भागत सिंग के आदालत में दिये बयान के कुछ शब्दो से हमारे देश के क्रान्तिकारियोंकी क्रांतिविषायक धारणा स्पष्ट होती है।

" क्रान्ति उस महान मौलिक परिवर्तन को कहते है, जो राजनीतिकक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक बुराईयों, रुढियों तथा कुप्रथाओं का नाश करके समाज का नया संगठन सार्वजनिक हित के लिए नियमानुसार करता है। " [१]

१९ वी शताब्दी में युरोप खंड में एक महान विचारक "कार्ल मार्क्स" ने "क्रान्ति" को "सामाजिक क्रान्ति" का रूप देकर अपना एक अलग दर्शन " मार्क्सवाद" के रूप में प्रकाशित किया। हमारे देश के लगभाव सभी क्रान्तिकारी इसी "मार्क्सवाद " के अनुगामी होने के कारण " मार्क्सवादी " दर्शन के बारे में सोचना आवश्यक है।

— मार्क्सवादी दर्शन —

कार्ल मार्क्स और उनके शिष्य एंगेल्स ने इस वाद की प्रतिष्ठापना की। "मार्क्सवाद" समाज के विकास का एक विशुध्द भौतिकवादी दर्शन है। वह विज्ञान की तरह अनुभाव, इतिहास

---

१. सिंहावलोकन भाग १ : यशपाल : पृष्ठ १८८ संस्करण १९७२

और सामाजिक तथ्योंपर आधारित होने के कारण गतिशील है। "मार्क्सवाद" के दो आधार स्तंभ हैं —

१ - द्वंद्वात्मक भौतिकवाद

२ - ऐतिहासिक भौतिकवाद

१. द्वंद्वात्मक भौतिकवाद —

मार्क्सवादी दर्शन का मूलाधार द्वंद्वात्मक भौतिकवाद है। मार्क्स ने किसी नये दर्शन की प्रतिष्ठापना की है यह बात सत्य नहीं है। उसने फ्रान्स से समाजवाद, हीगेल से द्वंद्ववाद और फायर बाख से भौतिकवाद ये तीन तत्व अपने सिध्दान्त में बीज रूप में ग्रहण किए। इन तीनों का मिला जुला रूप "द्वंद्वात्मक भौतिकवाद" अथवा "मार्क्सवाद" है।

"मार्क्स भौतिक पदार्थ को सब से अधिक महत्व देता है। द्वंद्वात्मक का अंग्रजी पर्याय "डायलेक्टिकल" है, जो युनानी शब्द "डायलिगो" से इस शब्द के पीछे "वार्तालाप" एवं "वाद--विवाद" का अर्थ निहित है। प्रसिध्द द्वंद्ववादी हीगेल यह राय थी कि अंतिम सत्य अंतर्विरोधोंको प्रकट करने और विरोधी विचारों की टक्कर होने से प्रकाश में आता है।" [१]

इस प्रकार मार्क्सवाद प्रथम प्रकृतिकी भौतिक सत्यता को सत्य मानता है। जगत के मूल में भूत तत्व है और वही विश्व की चरम सत्ता है, ऐसा मार्क्स का मत है। आपनी ज्ञानेंद्रियों से जाननेलायक जो भी देश का रूप है, वह भूत ही है। भूत वह साकार वास्तविकता है जिसका पता हमें वेदनाओं से मिलता है।

---

१. मार्क्सवाद और हिन्दी उपन्यास : डॉ. एन्. रविन्द्रनाथ : पृ. १९
संस्करण १९७६

अमूर्त का संबंध गति के साथ है। गति पदार्थ के अस्तित्व का एक अविभाज्य रूप है। जगत में गतिशीलता का एक अविभाज्य रूप है। जगत् में गतिशीलता सर्वत्र तथा सार्वकालिक रूप में विद्यमान है। गति सामान्य से असामान्य की ओर नीचे से ऊपर की ओर धावित होती है। द्वन्द्वात्मक भौतिक वाद में विकास के तीन सूत्र माने हैं -

१. विरोधी समागम -- विरोधी समागम में विरोधी वृत्तियाँ परस्परिक संबंधों में बँधी हुई होती है। विरोधी समागम से अंतर्विरोधों का परस्पर संघर्ष अनिवार्य हो जाता है। यह अंतर्विरोध अथवा असंगति ही परिवर्तन अथवा विकास का मूल आधार माना है।

२. परिवर्तन -- परिवर्तन की प्रक्रिया परिमाणात्मकता से गुणात्मकता की ओर निरंतर अग्रसर होती रहती है। जब परिणामात्मक परिवर्तन अपने चरम बिंदु पर पहुँचता है, तब वह गुणात्मक बन जाता है। जिस प्रकार पानी का तापमान गिरते गिरते एक विशिष्ट हिमबिन्दु तक आता है, तभी समूचा पानी एकदम बर्फ में रूपान्तरित होता है, उसी प्रकार यह परिवर्तन की प्रक्रिया एकदम गुणात्मक बन जाती है।

३. निषेध का निषेध — मार्क्स ने विकास के लिए पूर्व रूप का निषेध आवश्यक माना है। मार्क्स ने क्रिया, प्रतिक्रिया और संश्लेषण को विकास की विभिन्न अवस्थाएँ माना है। " जब क्रिया अपने आंतरिक विरोधों के कारण भंग हो जाती है, तब व प्रतिक्रिया को जन्म देती है। यह प्रतिक्रिया जो क्रिया का निषेध है, क्रिया के अंतर्विरोधों को दूर करनेकी चेष्टा करती है। कलान्तर में अपने कुछ अंतर्विरोधों के कारण प्रतिक्रिया भी भंग हो जाती है, और संश्लेषण को जन्म देती है। चूँकि संश्लेषण प्रतिक्रिया का

भी, जो पहला निषेध है, निषेध करता है, अतः यह निषेध का निषेध है।" [१]

यह निषेध वस्तु विकास में सहायक होता है। इस में पूर्व स्थिति का सर्वथा विनाश नहीं होता बल्कि उसके अनावश्यक पक्ष का विनाश होता है, और वस्तु का विकास शुध्द रीति से होता है।

२. ऐतिहासिक भौतिकवाद --

द्वंद्वात्मक भौतिकवाद जब मनुष्य के सामाजिक जीवनपर लागू किया जाता है, तो वह ऐतिहासिक भौतिकवाद समझा जाता है। इसमें सामाजिक विकास तथा व्यवस्था का स्वरूप निर्धारित होता है।

ऐतिहासिक भौतिकवाद के मूलभूत सिध्दान्त --

ऐतिहासिक भौतिकवाद के तीन मूलभूत सिध्दान्त माने जाते हैं -

१. कोई सामाजिक घटना तभी घटित होती है, जबकि उसके अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण हो गया हो या उसके लिए आवश्यक कारण विद्यमान हो।

२. यद्यपि सामाजिक परिवर्तन मानव व्यक्तियोंकी सचेतन चेष्टाओं के परिणाम हैं, तो भी सचेतन चेष्टाएँ अंतिम विश्लेषण में उनके सामाजिक अस्तित्व और भौतिक जीवन के द्वारा ही निर्धारित होती है। विभिन्न दृष्टिकोण और संस्थाएँ, राजनीतिक, सांस्कृतिक और वैचारिक विकास इसी मूलधार-मानव के भौतिक जीवनपर

---

१. मार्क्सवाद और हिन्दी उपन्यास : डॉ. एन्. रविन्द्रनाथ पृ. २४
संस्करण - १९७६.

खड़े ढाँचे ही है।

३. भौतिक मूलाधार पर खड़ा यह सामाजिक ढाँचा उस मूलाधार के विकास में एक सक्रिय भूमिका भी अदा करता है।" [१]

मार्क्सवादी विभिन्न सामाजिक घटनाओं को विशेष ऐतिहासिक अवस्थाओंमें पूर्ण रूपसे घटित मनुष्य की क्रियाओं के व्दारा संचलित मानते है। उनका यह विश्वास है कि अतीत के व्दारा अवस्थाओंका प्रत्यक्ष सामना करते हुये मनुष्य स्वयं इतिहास का निर्माण करता है, लेकिन परिस्थितियाँ विभिन्न होनेके कारण वह अपनी रुचि के अनुसार यह कार्य नही कर सकता। मार्क्सवाद, इतिहास का अध्ययन इस दृष्टिकोण से करता है कि उन प्राकृतिक नियमों का पता लगा सके जो सारे मानव के इतिहास का संचलन करते हैं।

समाज तथा अर्थ से संबंधित मानवीय इतिहास का परिवर्तन --

सामाजिक और आर्थिक स्वरूप में मार्क्सवादी विचारकों ने मानवीय इतिहास के निम्न युग माने है --

१. आदिम युग -- मनुष्य की आदिम अवस्था का यह युग था। इस स्थिति में मनुष्य समूह में रहता था। उसकी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सामुदायिक रीति से होती थी। उत्पादन की शक्तियोंपर उसका सामुदायिक अधिकार था। मनुष्य के विकास के साथ साथ उसका उत्पादन बढ गया। कलों की खोजो से उसकी सामूहिक शक्ति का ह्रास होता रहा। उत्पादन के अधिक बढने से सुविधा भोगी तथा धनोपजीवी वर्ग निर्माण होने लगा। इसी युग में ही दास - व्यवस्था की नीव डाल दी गयी।

---

१. मार्क्सवाद और हिन्दी उपन्यास : डॉ. एन. रविन्द्रनाथ पृ. २६
संस्करण - १९७६.

3891
A

२. दास युग — इस युक में उत्पादन के सामूहिक प्रयत्न नष्ट होने के कारण समाज में दास [श्रमिक] और दासों के "मालिक" ये दो वर्ग निर्माण हुअे। दास-प्रथा शोषण की भयानक अवस्था थी। इन दो वर्गों के अंत: संघर्ष ने नयी " सामन्ती" समाज व्यवस्था को जन्म दिया।

३. सामन्ती युग — इस युग में समाज - व्यवस्था दो वर्गों में विभाजित रही। [१] सामन्त वर्ग और [२] कृषक वर्ग। कृषक वर्ग सामंतो का आश्रित था, और उनकी श्रम शक्तिपर सामंत वर्ग का पूरा अधिकार था। सामन्तों की "भूमि" पर कृषक वर्ग का श्रम सींचा जाता था। इस युग में किसान और सामन्त इन दो वर्गोंके तीव्र संघर्ष के कारण एक नयी समाज-क्रान्ति धीरे धीरे संघर्ष के कारण एक नयी समाज-क्रान्ति धीरे धीरे पल्लवित हो रही थी। इस संघर्ष से नया पूँजीवादी युग, जो कि सामान्ती वर्ग की उपज थी, शुरु हुआ।

४. पूँजीवादी युग — पूँजीवाद धन प्राप्त करने की खास शैली है। इस में मनुष्य केवल अपनी पूँजी के बलपर ही समाज के सर्वाधिकार प्राप्त करता है। इस युग में प्रारंभ में भाईचारे के नारे लगाकर श्रमजीवी वर्ग के लोग धीरे धीरे पूँजीपति हो गये, और पूँजी के बलपर देश की राजनैतिक शक्ति उन्होंने हाथिया ली, और नयी साम्राज्यवादी शक्ति निर्माण कि।

इस वर्ग के प्रतिनिधियों ने धन की लालच में श्रध्दा, धर्म और निति को गौण स्थान दिया। उत्पादन करनेवाला श्रमजीवी वर्ग तो इनका दुश्मन ही हो गया। इस वर्ग का उन्होंने विकास नहीं किया। समाज में इस प्रकार एक नया "सर्वहारा" वर्ग निर्माण हुआ।

SHIVAJI UNIVERSITY KOLHAPUR

सर्वहारा वर्ग और वर्ग-संघर्ष —

अपने श्रम को बेचकर अपनी जीविका चलानेवाले समाज के वर्ग को "सर्वहारा" वर्ग कहते हैं। इस वर्ग का विकास पूँजीवादी वर्ग के साथ ही होता है। पूँजीवादी वर्ग की संपत्ति जैसे जैसे बढ़ती जाती है वैसे वैसे सर्वहारा वर्ग की संख्या भी बढ़ती जाती है। सर्वहारा वर्ग और पूँजीवादी वर्ग में हमेशा अंतर्विरोधात्मक संघर्ष रहता है। इसी वर्ग-संघर्ष से नयी क्रान्ति का निर्माण, सर्वहारा वर्ग का पूँजी पर समान अधिकार, यही मार्क्स प्रणीत क्रान्तिका मुख्य उद्देश्य है।

इसका मतलब ऐसा नहीं कि सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व ही स्थापित करें, बल्कि ऐसे स्वयंचलित समाज-व्यवस्था की स्थापना करना, जहाँ न शोषकों का राज्य हो न शोषितों का। श्रम का समान विभाजन इसी समाज - व्यवस्था में विशेष महत्वपूर्ण उद्देश्य है।

— समाजवाद —

समाजवाद व्यक्तिवाद का विरोधी पर्याय है। व्यक्तिवादी सिद्धान्त के कारण समाज सदैव सदोष रहा। मार्क्स ने इसपर गहरा चिन्तन करके समाज का संगठन समता और सहयोग के आधारपर करने का सुझाव दिया।

समाजवाद में व्यक्ति समाज का अभिन्न घटक समझा जाता है। समाज में आर्थिक समता प्रथम आवश्यक है, क्यों कि राजनीति अर्थ की नींव पर ही स्थिर रहती है।

हमारे देश के लगभग सभी आतंकवादी, विशेष रूप से, "हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र संघ" के सभी सशस्त्र क्रान्तिकारी अंग्रेजो की शोषण मूलक क्रान्ति का सशस्त्र विरोध करके मार्क्सप्रणीत नयी समाजवादी समाज रचना को इस देश में प्रस्थापित करने के पक्षपाती थे। इस उद्देश्य के संबंध में यशपाल लिखते है, " हमारी क्रान्ति का लक्ष्य एक नवीन न्यायपूर्ण सामाजिक [redacted] व्यवस्था है। इस क्रान्ती का उद्देश्य पूँजीवाद को समाप्त करके श्रेणीहीन समाज की स्थापना करना, और विदेशी और देशी शोषण से जनता को मुक्त करके आत्म निर्णय द्वारा जीवन को अवसर देना है। " [१]

क्रान्ति की परिभाषा के बारे में इन आतंकवादियो के विचार स्पष्ट और विशुद्ध थे। भगतसिंग की क्रन्ति की परिभाषा इस प्रकार थी -- "क्रान्ति की वास्तविक शक्ति जनता द्वारा समाज की आर्थिक और राजनैतिक व्यवस्था में परिवर्तन करने की इच्छा ही होती है। हमारी आधुनिक परिस्थितियों में क्रान्ति का उद्देश्य कुछ व्यक्तियो का रक्तपात करना नही है, बल्कि मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण की प्रथा को समाज करके इस देश की जनता के लिए आत्म निर्णय और समान अवसर का अधिकार प्राप्त करना है। " [२]

इस प्रकार मार्क्स ने जिस मानवतावादी समाजवाद का वैज्ञानिक चिंतन किया था उसे विश्व के सर्वहारा वर्ग ने अत्यंत उत्साह के साथ अपना लिया। रूस की अक्तूबर क्रान्ति इसका ज्वलंत उदाहरण है। हमारे देश में भी पूँजीवाद के समर्थ अंग्रेजो की शोषण निति को

---

१. सिंहावलोकन भाग २ : यशपाल : पृष्ठ १३४ संस्करण १९७७.

२. सिंहावलोकन भाग २ : यशपाल : पृष्ठ १७९ संस्करण १९७७.

समाप्त करने के लिए इसी " सामाजिक क्रान्ति दर्शन" को अपना लिया। " सशास्त्र क्रान्ति" इसका ही दूसरा नाम है।

-- भारत का क्रान्तिकारी आंदोलन --

पूर्व - पीठिका --

हमारे देश में मार्क्सवाद के प्रवेश के कई वर्षों पहले अंग्रजो के विरोध में विद्रोह अथवा क्रान्ति के कई प्रयत्न हो चुके थे। उन देशभक्तों को शस्त्र की सहायता से भगा देना। इसके लिए किसीभी हिंसक कृत्य का अवलंब करना और अंत में हँसते फासी के तख्ते को चूमना।

सन १७५७ की प्लासी की इतिहास प्रसिध्द लडाई में सच्चे अर्थ में हम सर्वप्रथम पराजित हुअे, और अंग्रजी युनियन जैक हमारी पवित्र भूमिपर फहराने लगा। तब से इस देश की यह परकीय सत्ता हटाने के लिए व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप में कई आतंकवादी तथा नि:शस्त्र आंदोलन हुअे।

प्लासी के युध्द के बाद कुछ ही वर्षों मे "बंगला की सेना का विद्रोह", "१७९५ का कलकता की सेना का विद्रोह", "१८०६ का मद्रास की नेवी सेना का विद्रोह", "१८५५ का निजाम की सेना का विद्रोह" और १८५७ का इतिहास प्रसिध्द स्वतंत्रता संग्राम आदि छोटे मोटे विद्रोहों के व्दारा अंग्रेजी को इस देश से हटानेके कई प्रयत्न हुअे। अंग्रजो ने सभी विद्रोहें को अत्यंत क्रूरता से दबाया। उनकी इस नृशंसता का परिणाम देशके उभरते नौजवानोंपर हुआ और देश तथा धर्म की आनपर जान कुर्बान करनेवाले क्रान्तिकारोंकी झडी ही हमारे देशके इतिहास में लगी रही।

परतंत्र भारत में क्रान्तिकारी आंदोलन का स्वरूप —

१. महाराष्ट्र --

भारत भू को स्वाधीन करने के हेतु वासुदेव बलवंत फड़के ने महाराष्ट्र में क्रान्ति का श्रीगणेश किया। रामोशी जाति के लोगों को संगठित कर धनिकों को लूटना और वह संपत्ति गरीबों में बाँट देना। अंग्रेजों के विरुद्ध प्रचार करना आदि फड़के के प्रमुख क्रान्तिकार्य थे। फरवरी सन १८८३ में काले पानी की सजा भुगतते समयही इस आदि क्रान्तिकारी का दुःखद प्राणांत हुआ

दामोदर चापेकर और विनायक चापेकर इन दोनो बंधुओं ने २२ जून १८९७ में निर्दयी कर्नल रेंड की हत्या की। उन्हें फाँसीपर चढ़ाया गया।

१९०७ में स्वातंत्र्यवीर विनायक सावरकरजी की प्रेरणा से "अभिनव भारत" नामक महत्वपूर्ण संस्था का जन्म हुआ। सावरकर बंधु इसके प्रमुख सदस्य थे। इस संस्था का प्रसार महाराष्ट्र में हुआ और स्वतंत्रता का महामंत्र कोने कोने फैलाया जाने लगा। इस के कारनामे भी नासिक, बम्बई और पूना में गुप्त रूप से चलाने लगे। ब्रिटिशोंने सावरकरजी के ये राष्ट्रोद्धारात्मक कार्य देखकर उन्हें आजीवन निर्वासित कर दिया.

सन १९०९ में औरंगाबाद के आर्ट स्कूल के एक छात्र अनंत कान्हेरे ने मि. जैक्सन की हत्या की। उन्हें फाँसीपर लटकाया गया।

बंगाल --

बंगाल में भी यह महाराष्ट्र की क्रान्तिज्वाला की लपटें शाघ्र ही पहुँच गयी। " अनुशीलन समिति" नामक एक महत्वपूर्ण संस्था ने बंगाल में विशिष्ट महत्वपूर्ण क्रान्तिकार्य किया। बंगाल में खुदीराम बोस, कन्हाई लाल, सत्येन्द्र बोस आदि शहीदों की शहादतों से समूचा बंगाल जागृत हो गया।

पंजाब तथा दिल्ली --

बंग भंग के बाद पंजाब और दिल्ली प्रान्तों में क्रान्ति की धारा प्रवाहित हुयी। लाला हरदयाल, लाला लजपतराय आदि महत्वपूर्ण नेता क्रान्तिकारियों को उत्साहित कर रहे थे। लाला हरदयाल के बाद मास्टर अमीर चंद ने क्रान्तिकारी दल का नेतृत्व संभाला। जतीन्द्रमोहन चटर्जी, दीनानाथ, रास बिहारी बोस, अवध बिहारी आदि क्रान्तिकारी इस प्रदेश में सक्रिय रहे हैं। दिसंबर १९१२ को दिल्ली के वायसराय हार्डिंज की गाडीपर बम फेंकने की घटना " दिल्ली षडयंत्र केस " के नाम से मशहूर है।

उत्तर प्रदेश, बिहार, उडिसा, मध्य प्रदेश, राजस्थान, मद्रास

महाराष्ट्र और बंगाल के क्रान्तिकारियों के संपर्क से शेष भारत के सभी प्रान्तों में क्रान्तिकार्य प्रारंभ हुआ।

उत्तर प्रदेश -- शचीन्द्र सन्याल की मदद से १९०८ में बनारस में " अनुशीलन समिति" स्थापित हुयी, जो बाद में "युवक समिति" के रूप में बदल गयी। सन्याल ने बहुतसे नौजवानों को क्रान्ति की दीक्षा दी।

बिहार — बिहार में कामाख्याबाबू, सुधीर कुमार सिंग, बंकिम चंद्र कार्यरत थे। बिहार में विशेष आतंकवादी घटनाएँ नही घटी।

मध्य प्रदेश — मध्य प्रदेश पर महाराष्ट्र के आंदोलन की छाप थी। अमरावती के गणेश खापर्डे विशेष महत्वपूर्ण क्रान्तिकारी थे।

राजस्थान -- राजस्थान में श्यामजी कृष्ण वर्मा और तिलकजी के प्रभाव में कार्य हो रहा था।

विविध क्रांति सूत्र —

प्रथम विश्वयुध्द के दरमियान हमारे देश में तथा विदेशों में विविध क्रान्तिकारी संघटनाएँ कार्यरत थी। रास बिहारी बोस ने संन्यालदा के साथ पंजाब से बंगाल तक क्रान्तिकारियों से संबंध स्थापित कर सभी क्रान्तिकारियों को एक सूत्र में बाँध दिया।

अमरीका में लाला हरदयाल ने "गदर पार्टी" की स्थापना कर "गदर" मुख पत्र के द्वारा क्रान्ति की आग अधिक प्रज्वलित करनेका प्रयास किया। पार्टी का " कामागाटा मारु " जहाज का विद्रोह विशेष महत्वपूर्ण घटना रही है। इस विद्रोह को भी अंग्रेजों ने क्रूरता से दबाया।

मध्य पूर्व में सरदार अजीत सिंह और अंबाप्रसाद भारतीय सिपाहियोंगा संगठन कर रहे थे।

राजा महेंद्र प्रसाद तो अफगाणिस्तान गये और वहाँ "आजाद हिन्द सेना" की स्थापना की। यह सैनिक क्रांति भी असफल रही।

नागार्जुन — "रतिनाथ की चाची", "बलचनमा", "बाबा बटेसरनाथ", आदि उपन्यासोंमें आपके देहाती जीवन के चित्रण द्वारा नवीन समाजवादी चेतना की ओर संकेत किया है।

भैरव प्रसाद गुप्त -- "मशाल", "गंगा मैया"
रांगेय राघव -- "घरौंदे"
राजेन्द्र यादव — "प्रेत बोलते हैं", ""उखडे हुअे लोग",
अमृतराय -- "बीज"

इन सभी उपन्यासोंमें विशुध्द समाजवादी चेतना का स्पष्ट आभास मिलता है।

ड] ऐतिहासिक उपन्यास --

"वृन्दावनलाल वर्मा", "चतुरसेन शास्त्री", "राहूल सांकृत्यायन", "रांगेय राघव" तथा "यशपाल" इस धारा के प्रमुख उपन्यासकार हैं।

वृन्दावनलाल वर्मा — "गढ कुंढार", "विराटा की पद्मिनी" "झांसी की रानी लक्ष्मीबाई", "कचनार" "मृगनयनी" "अहिल्याबाई" आदि --

चतुरसेन शास्त्री -- "वैशाली की नगर वधू" सोमनाथ", "वयं रक्षाम", "आम्रपाली" आदि

राहूल सांकृत्यायन -- "विस्मृत यात्री, "जय योधय"
रांगेय राघव — "मुर्दों का टीला"
यशपाल -- "दिव्या", "अमिता"
डॉ. हजारीप्रसाद व्दिवेदी -- "बाणभट्ट की आत्मकथा"

ये सभी उपन्यास भारतीय इतिहास की सुंदर झाँकियाँ प्रस्तुत करने में सक्षम बन गये हैं।

— यशपाल का उपन्यास - प्रवेश —

यशपाल के पूर्व हिन्दी उपन्यास-विश्व मूलत: दो विभागों मे विभाजित था —

१. प्रेमचंद के प्रभाव में यथार्थोन्मुख आदर्शवाद का चित्रण करनेवाले उपन्यास, और
२. जैनेन्द्र के प्रभाव में मनोविश्लेषणवादी धारा के उपन्यास।

हिन्दी उपन्यास जगत् में मार्क्सवादी दर्शन से प्रभावित होकर श्रमजीवी वर्ग को विशेष रूप से चित्रित करके समाजवादी उपन्यास की प्रतिष्ठापना सर्वप्रथम करनेवाले श्रेष्ठ उपन्यासकार यशपाल ही हैं। यशपाल ने आर्थिक समस्या को सामाजिक विषमता का मूल मानकर शोषितों की पीड़ा और दु:खों को प्रमुख स्वर दिया है, और शोषितों के वर्गविहीन राज्य की कल्पना की है।

यशपाल ने अपनी रचनाओं के माध्यम से हिन्दी उपन्यास-साहित्य को एक नया मोड़ प्रदान किया है। यशपाल पर पूर्ववर्ती साहित्य का प्रभाव न रहने का प्रमुख कारण है -- उनका सशस्त्र क्रांतिकारी जीवन से साहित्यिक क्षेत्र में पदार्पण करना।

इस देश की स्वतंत्रता के लिए हाथमें पिस्तोल और बम लेकर सशस्त्र क्रांति करनेवाले "हिंसप्रस" के प्रमुख क्रांतिकारी यशपाल का पूर्व-जीवन अभावों की तीव्र और दुखद अनुभूतियों

SHIVAJI UNIVERSITY KOLHAPUR

से भरा हुआ था। यशपाल मार्क्सप्रणीत समाजिक क्रान्ति के प्रमुख सेनानी होने के कारण उनके उपन्यासोंमें मार्क्सवादी क्रान्ति के विचारों का प्रभाव दीख पडता है। समाज की रोटी समस्या, सेक्स समस्या, भारतीय समाजवादी विचार धारा का प्रमुख अंग रहे हैं। सेक्स यशपाल का विशेष प्रिय विषय लगता है। कहीं कहीं मार्क्सवाद के नामपर उन्मुक्त सेक्स का नग्न प्रदर्शन हीन सा लगता है।

जो भी हो , यशपाल हिन्दी उपन्यासाकाश में स्वयंप्रकाशित शुक्र जैसे तेजस्वी लगते हैं। यशपाल के प्रभाव के कारण ही हिन्दी उपन्यास में " समाजवादी" विचार धारा का प्रवेश हुआ और यह धारा गंगा जैसी विस्तृत होती गयी।

इ] मनोविश्लेषणवादी उपन्यास --

व्यक्तिवादी जीवन-दर्शन के चरम विकास की स्थिति में विशेष रूपसे मध्यम वर्गीय व्यक्ति आत्म-केंद्रित बन जाता है। ऐसा व्यक्ति प्रकृत यथार्थ की ओर अग्रसर होता है। कभी कभी व्यक्तिगत दमित भावों की अति के कारण ये भाव विकृत कुण्ठाओं के रूप में बदल जाते हैं।

व्यक्ति की इन्ही कुण्ठाओं का विश्लेषण करनेवाला उपन्यास मनोविश्लेषणवादी उपन्यास कहलाता है। इस श्रेणी के उपन्यास लिखनेवालों में "जैनेंद्र" , " इलाचंद्र जोशी", " अज्ञेय", आदि उपन्यासकारों को गिनाया जा सकता है।

जैनेन्द्र : - आप के "सुनीता", "परख", "कल्याणी", "त्याग-पत्र", आदि उपन्यास स्त्री मन का विश्लेषण करते है।

अज्ञेय :— "शेखर : एक जीवनी", और " नदी के द्वीप"।
डा. देवराज :— "पथ की खोज", "बाहर और भीतर"।
धर्मवीर भारती :— "गुनाहों का देवता " और "सूज का सातवाँ घोडा"।
अनन्त गोपाल शेवडे :— " निशा-गीत" और मृग जल "।
प्रभाकर माचवे :— "द्वाभा "
नरेश मेहता :— "डूबते मस्तूल "।

फ] राजनीतिक उपन्यास :— इस प्रवृत्ति के प्रमुख प्रवर्तक हैं – "गुरुदत्त" और " यज्ञदत्त शर्मा"। गुरुदत्त के " देश की हत्या", "विडम्बना", "वाम मार्ग", "विकृत छाया", " विश्वास घात " आदि उपन्यासों में राजनीति को प्रमुख आधार बनाकर उपन्यास रचना हुई है।

यज्ञदत्त शर्मा के " दो पहलू ", "इन्सान", "निर्माणपथ" , "महल और मकान", "इन्साफ" आदि उपन्यासों में भी राजनीति, देशभक्ति, युध्दजन्य स्थिति आदि का यथार्थ चित्रण मिलता है।

संक्षेप में हिन्दी उपन्यास साहित्य अपने प्रारंभिक रूप से होकर आधुनिक युगतक विषय वस्तु और कला की दृष्टिसे असाधारण प्रगति के पथपर अग्रसर रहा है।

यशपाल का समग्र जीवन ही एक सनसनीखेज युध्द-कथा है। क्रान्तिकारी यशपाल ने जब पिस्तोल छोडकर कलम हाथ में ली तब उनकी कलम उनके विशाल अनुभव विश्व के कारण बहुमुखी बन गयी। उनके इस सर्वगामी अनुभव विश्व के कारण आपके उपन्यासोंका आत्यंतिक विभाजन करना कठिन है। आपके उपन्यास न शुध्द राजनीतिक है न शुध्द सामाजिक और न ही शुध्द ऐतिहासिक। फिर भी मोटे तौरपर जिस उपन्यास में जो विचार प्रधान है, उसी के आधार पर उनका विभाजक इस प्रकार किया जाता है —

१]	राजनीतिक उपन्यास :—	१] दादा कामरेड, [२] देश द्रोही, ३] पार्टी कामरेड, [४] झूठा - सच
२]	सामाजिक उपन्यास :—	१] मनुष्य के रूप [२] अप्सरा का श्राप ३] बारह घण्टे [४] क्यों फँसे ५] मेरी तेरी और उसकी बात।
३]	ऐतिहासिक उपन्यास :—	१] दिव्या [२] अमिता
४]	अनूदित उपन्यास :—	१] पक्का कदम [२] जनानी ड्योढी ३] चक्की में अमृत [४] जुलेखा"

१] राजनीतिक उपन्यास

यशपाल मार्क्सवादी विचार-धारा से प्रभावित होने के कारण स्वातंत्र्य पूर्व कालमें और स्वतंत्र्योत्तर कालमें लिखे उनके कुछ उपन्यासों में मार्क्सवादी समाज रचना का कर्मठ रीति से मंडन और गांधीवाद का खंडन मिलता है। इस धारा के उपन्यासों में मुख्यत: देश की कांग्रेसी नीति, चुनाव, क्रान्ति का कार्य, मजदूर आंदोलन आदि राजनीतिक विषयोंको कथानक का आधार मानकर मार्क्सवादी विचारों को राजनीति में सर्वेसर्वा माना है। कुछ उपन्यास तो मार्क्सवाद के प्रचार के लिए ही लिखे हुओ से लगते हैं।

१] दादा कामरेड [१९४१ ई.वी.]

प्रस्तावना :— "दादा कामरेड" यशपाल का सर्वप्रथम राजनीतिक उपन्यास है। यशपाल के समग्र क्रान्तिजीवन का यह एक रूपकात्मक आलेख है। सशस्त्र क्रान्ति की आतंकवादिता से उबकर साम्यवाद

की ओर बढती हुई अपनी भावना को यशपाल ने एक रोमांटिक कथा के द्वारा अभिव्यक्त किया है। इस उपन्यास में उपन्यास नायक हरीश के रूप में " यशपाल" और दादा के रूप में "चंद्रशेखर आजाद" स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते है।

संक्षेप में कथानक :--

"दादा कामरेड" यशपाल के क्रान्तिकारी जीवनानुभूतियों की एक यथार्थ और मार्मिक झांकी है। इस उपन्यास की कथावस्तु का चयन इस. स. १९३० के आसपास की अस्थिर राजनीतिक घटनाओं से किया है। इ.स. १९३० के आपसपास "आजद" की सशस्त्र क्रान्तिकारी दल [हिंसप्रस] करीब करीब आस्थाहीन, दिशाहीन और बिखरा हुआ सा था। स्वयं यशपाल भी आतंकवाद की व्यर्थता से उबकर रूसी साम्यवाद की ओर आकृष्ट हो रहे थे।

" दादा कामरेड" यशपाल का सर्वप्रथम राजकीय उपन्यास है जो, १९४१ में लिखा गया। इसमें राजनीति, रोमान्स और साम्यवादी सिध्दान्तों का अपूर्व त्रिवेणी संगम है।

सशस्त्र क्रान्तिकारी हरीश उपन्यास की कथावस्तु का नायक है। उपन्यास के प्रारंभ में बबकेस का फरार कैदी हरीश लाहोर में स्थित बीमा एजंड अमरनाथ के घरमें पुलिस की निगाह बचाता हुआ घुसता है। अमरनाथ की पत्नी यशोदा, अन्जाने व्यक्ति को बलपूर्वक घसते देख अपने पतिको आवाज देना चाहती है, लेकिन हरीश के हाथ की पिस्तोल देखतेही चुप रहती है। जब उसे मालुम होता है कि हरीश फरार क्रांतिकारी है तब वह अत्यंत आदर के साथ उसकी मदद करती है। कथा वस्तु का यह प्रथम प्रसंग नाटकीय और पाठकोंकी जिज्ञासा को उकसानेवाला है।

"कानपुर" में जो सशस्त्र क्रान्तिकारी पार्टी की " केंद्रीय सभा" होती है उसका हरीश महत्वपूर्ण मेंबर है। "केंद्रीय सभा" के कमांडर "दादा" हैं। इस सभा में बी. एम. अली, जीवन आदि अन्य आतंकवादी सभासद भी इस सभा के मेंबर है। हरीश के आने से पहले हरीश का सशस्त्र क्रांति की अपेक्षा साम्यवाद की ओर झुकाव के बारे में सभा में सरगर्मी निर्माण हो जाती है। पार्टी के अनुशासन भंग का आरोप भी उसपर जलनेवाले उसके साथी लगाते है।

"एक लडकी जो पार्टी को सहायता देती आयी है और जो पार्टी के काम के लिए घर छोडकर आना चाहती है उसे हरीश ने केवल अपनी प्रेमिका बनाए रखने के लिए पार्टी के दूसरे लोगों से मिलने और घर छोडने के लिए मना कर दिया है। वह लोगों को यह समझाता है कि पार्टी का काम व्यर्थ है, और दादा तथा पार्टी के दूसरे मेंबर मूर्ख हैं -- वे कुछ नहीं समझाते। दादा और पार्टी के दूसरे मेंबर कुछ पढे लिखे नहीं -- वे कुछ स्टडी नहीं करते -- पार्टी का काम दूसरे ढंग से होना चाहिए।"[1]

इसपर हरीश अपने नये साम्यवादी विचार स्पष्ट रूपसे बता देता है। क्रान्तिकार्य का मतलब सिर्फ डकैतियाँ और खून-खराबा ही नहीं है, यह अपने साथियों को समझानेकी वह कोशिश करता है। उसकी इस बातका उल्टाही अर्थ लिया जाता है, और पार्टीका अनुशासन भंग करनेवाले हरीश को " दादा" की अनुज्ञा से "शूट" करनेका निर्णयहोता है। पार्टीका यह निर्णय हरीश के चले जाने के बाद होता है। वहाँ से [कानपुर] हरीश के [redacted] सीधा लाहोर में अपने मजदूर मित्र अख्तर के यहाँ पनाह लेता है। वहाँपर उसे मजदूरोंकी असहय स्थिति का पता चलता है और वह मजदूरोंको

- -

१. दादा कामरेड : यशपाल : पृष्ठ ४९

न्याय देने के लिए कुछ कार्य करनेका विचार करता है।

इधर हरीश को ढूँढने के लिए दादा और बी.एम. शैलबाला के घर आते हैं। वहींपर किसी अज्ञात व्यक्ति व्दारा हरीश को बचानेकी सूचना शैल को मिल जाती है। शैल दादा और बी.एम. को बहुत ही खरी-खोटी सुनवाती है। संयोग से हरीश भी शैल से मिलकर उसके घर आता है। अत्यंत चतुरता और प्रसंगावधान से शैल हरीश को फरार होनेका संदेश देकर अपनी सहेली यशोदा के घर भेज देती है। हरीश, जे.आर. शुक्ला के झूठे नामसे यशोदा के पति अमरनाथ से बातचित करता हुआ समय काटकर फिर शैल के साथ चला जाता है। रास्ते में शैल हरीश को पार्टी के "शूट निर्णय का ब्योरेवार वृत्तान्त बताती है और उसे अपने भावी पति और प्रेमी रॉबर्ट के बंगलेपर छोडती है। वहाँ हरीश मिराजकर के छद्म नाम से रहता है। एक दिन रॉबर्ट, शैल, रॉबर्ट की बहन नैनसी और हरीश कुछ दिनों के लिए मसूरी जाते हैं।

मसूरी से लौटकर हरीश फिर मजदूर बस्ती में रहने लगता है। मजदूरों पर होने वाले मिल-मालिकों के अन्यायों का संगठित होकर विरोध करने में वह प्रयत्नशील रहता है। वह अपना हुलिया बदलता है, तेजाब से चेहरा जलवाता है, तथा सामनेवाले दो दाँत निकालकर सुल्तान के नये नाम से मजदूरों मे रहकर साम्यवादी विचारोंका प्रसार करता रहता है।

एक दिन रफिक, रॉबर्ट, और शैल की सहायता से वह मजदूरोंकी माँगोंको लेकर लम्बी हडताल शुरू करता है। दो महिने बाद रॉबर्ट के भी पाँव उखाडने लगते हैं। शैल भी अपने पूँजीवादी पिता से कुछ सहायता न मिलते निराश हो जाती है।

एक दिन दादा शैल के घर आते हैं। शैल उन्हें हरीश की सारी कहानी बता देती है। दादा हरीश की कहानी सुनकर व्यथित हो जाते हैं। हरीश के कार्य में डाका डालकर २० हजार रुपयों की महत्वपूर्ण मदद वे शैल के हाथोंमें थमा देते हैं। कथावस्तु का चरमोत्कर्ष यहींपर है।

इन पैसों के बलपर मजदूरोंकी जीत होती है। उनकी सारी माँगे पूरी हो जाती हैं। एक दिन पुलिस की नजर एक नोटपर पडती है जिसका नंबर सेठ जीवाराम भोलाराम के बहीखाते में होता है। दादा के द्वारा डाले डाके में सेठ भोलाराम जीवाराम की मृत्यु हो गयी थी। नोट से पुलिस सुराग लेती हुअी सुल्तान [हरीश] की कोठीपर छापा मारती है, और उसके साथी रफीक और कृपाराम को भी हिरासत में लिया जाता है। रफीक, कृपाराम, अख्तर और हरीश पर चोरी और कत्ल का इल्जाम साबित करके उन्हें फाँसी की सजा दी जाती है।

इधर इस निर्णय को सुनते ही शैलपर बाज ही गिर जाती हैं। वह बीमार रहती है। उसके पिताजी से उसे हरीशद्वारा गर्भ रहने की जानकारी मिलती है। वह पिताजी का गर्भपात का निर्णय ठुकराकर अपने घर का सदा के लिए त्याग करती है, और अपने प्यार हरीश के बच्चे को हरीश के रूपमें देने के लिए वह दादा के आश्रय में चली जाती है।

कथावस्तु का अंत इस प्रकार हृदयद्रावक हुआ है।

कथावस्तु की शिल्पगत विशेषताएँ

१. कथावस्तु का प्रारंभ हरीश के पलायन से और अंत हरीश की फाँसी से हुआ है। प्रारंभ चित्ताकर्षक और अंत दिल को कचोटने वाला है। अंत में लेखक अपने विचारों के प्रति आस्थावान दीख पडता है।

२. प्रमुख कथा हरीश की है। इस कथा को पुष्ट और प्रभावी बनाने के लिए दादा और उनके आतंकवादी सहकारी बी. एम., अली की कथा, रॉबर्ट-नैनसी की कथा, अख्तर की कथा के साथ जोड दी गयी हैं। सभी उपकथाएं शैल के द्वारा हरीश की कथा के साथ जोडने का लेखक का प्रयत्न अत्यंत कलात्मक लगता है।

३. सन १९३० में यशपाल और उनके विचारों के कुछ क्रान्तिकारी सशस्त्र क्रान्ति की विफलता को जानकर साम्यवाद की ओर झुक रहे थे। यशपाल इस टूटती आस्था का चित्रण प्रस्तुत उपन्यास के कई प्रसंगो में यथार्थता से किया हुआ है। आतंकवादियों का आत्मघाती सिध्दान्त इस उपन्यास में बलहीन और उद्देश्य से दूर का बताया है, और साम्यवादी मजदूर क्रान्ति ही समाजवादी समाजरचना का प्रमुख सूत्र माना है।

४. कथा वस्तु इस साम्यवादी राजनैतिक विचारधारा के साथ प्रगतिवादी रोमैंटिकता भी शैल के माध्यम से खुलकर सामने आती है।

२] देशद्रोही [१९४४]

प्रस्तावना :--

यशपाल के राजनीतिक उपन्यासों की यह दूसरी कडी है। इसकी कथावस्तु १९30 के असहयोग आंदोलन से दूसरे विश्वयुध्द तक की है। कुल नौं अध्यायों में ग्रंथित इस उपन्यास की कथावस्तु यशपाल की गजब की कल्पना शक्ति और रूमानियत का सुन्दर उदाहरण है।

संक्षेप में कथावस्तु :—

लाहोर मेडिकल कालेज में डाक्टरी शिक्षा पास होनेपर उपन्यास के नायक डॉ. भगवानदास खन्ना फौजी डाक्टर बन देशकी उत्तर - पश्चिम की सीमान्त छावनी में सेवा के लिए जाते है। अपनी पत्नी राजदुलारी को वे दिल्ली में छोड वे अकेले जवानों की सेवा करते रहते हैं। एक दिन अचानक वजीरीस्तान के कुछ छापामार डॉ. खन्ना की छावनीपर धावा बोलकर उसे पकडते हैं और रातके गहन अंधेरे में अपने साथ वजीरीस्तान ले जाते हैं। उसे वहाँ अनेक यंत्रणाएँ देकर ५००० रु. वसूल करनेका वजीरी प्रयत्न करते हैं। इस कोशिश में असफल होनेपर वजीरी उसे मुसलमान धर्म की दीक्षा देकर " अन्सार" को बेच देते है। अब्दुल्ला के एक रोग का डॉ. खन्ना उर्फ अन्सार योग्य इलाज करता है। डाक्टर के उपकारोंसे द्रवीत होकर अब्दुल्ला अपनी बेटी

"नर्गिस" के साथ उसकी शादी करता है। कई दिनोंतक डाक्टर अब्दुल्ला के घर रहता है और एक दिन एक व्यापारी पुत्र "नसिर" के साथ रूस भाग जाता है।

समरकंद [रूस] आनेपर डा. खान्ना को एक चिकित्सालय में नौकरी मिल जाती है। यहांपर उसकी कामरेड खातून तथा कामरेड गुलशा से मुलाकात होती है। "गुलशा" उसके प्रति आकर्षित होती है, परंतु डा. खान्ना राजनीतिक शिक्षा प्राप्त करनेके लिए मास्को जाता है। वहां से जाली पासपोर्ट बनवाकर "नासिर" के साथ वह भारत आता है।

इधर पांच मास तक डाक्टर की कोई खबर न मिलनेपर सरकार उसकी पत्नी "राजदुलारी" को डा. खान्ना की आकस्मिक मृत्यु की सूचना भेज देती है। दुखी राज को सांत्वना और सहारा देने का कार्य कांग्रेस नेता, बद्रीबाबू करते हैं।

डाक्टर का कालेज-मित्र शिवनाथ डाक्टर की तरह कामरेड ही है। वह बद्रीबाबू की कृपा से "कांग्रेस सोशालिस्ट दल" में शामिल होता है। इधर राजदुलारी बद्रीबाबू के साथ विवाह-बध्द होती है और, रजिखेत में अपने एक बच्चे के साथ रहती है। उसकी बहन "चंदा" का विवाह एक अत्यंत दकियानूसी विचारोंवाले "राजाराम" के साथ हो जाता है।

देश में राजनीतिक तुफान छिड उठता है। १९४२ के आंदोलन में शिवनाथ मजदूर नेता बनकर कांग्रेस का कार्य करता रहता है तो डा. खान्ना डा वर्मा के जाली नाम से कम्युनिस्ट पार्टीका कार्य करता है। यहां उन्हे अपनी पत्नी "राज" की शादी का समाचार मिल जाता है।

१९४२ के आंदोलन में कम्युनिस्ट पार्टी ने " भारत छोडो" आंदोलन का विरोध करके अंग्रजों की "युध्द निति" का समर्थन करने का आदेश दिया। शिवनाथ " कांग्रेस सोशालिस्ट दल" का होने के कारण कांग्रेस के आदेशानुसार "युध्द विरोधी" आंदोलन में अपने मजदूर संगठनों को उकसाता है। डा. वर्मा मजदूर की पार्टी के मजदूर एक दिन मिल को आग लगाते है, जिनका विरोध करनेवाले डा. खन्ना की बुरी तरह से पिटाई होती है। शिवनाथ डा. खन्ना को २४ घण्टे के अंदर इलाज छोडनेकी सलाह चंदा के व्दारा देता है। यदि वह न मानेगा तो उसके जाली पासपोर्ट से भारत आनेका रहस्य को सरकारके सामने डालनेकी धमकी भी वह देता है।

शरीर से और मनसे घायल डा. खन्ना चंदा के साथ अपनी पत्नी राज से कुछ सहारा पाने की आशा से रनिखेत जाता है परंतु राज के ठण्डे स्वागत से उसे चंदा के साथ वापस आना पडता है। वापस आते समय चंदा को ढूंढता हुआ उसका पति "राजाराम" आता है। डा. खन्ना को "देशद्रोही" कहकर वह चंदा को पीटता हुआ उसे अपने घर घसीट ले जाता है। डा. खन्ना बेचारा अकेलाही पर काटे पंछी की तरह बेसहारा बनकर रहता है। राजाराम के "देशद्रोही" दूषण से वह बहुत व्यथित होता है। अपने आर्त स्वर में वह अपने "देशद्रोही" न होने के बारे में चंदा से कहता है, " चांद मैं देश द्रोही नही .... चांद उससे कहना .... हां साहस से। "[१] यही पर कथावस्तुका हृदयद्रावक और सूचक अंत होता है।

---

१. देशद्रोही : यशपाल - पृष्ठ २७१

कथावस्तु की शिल्पगत विशेषताएँ —

१. उपन्यास का प्रारंभ अचानक गिरी बाज की तरह सारी कथावस्तु को झकझोरनेवाला, अपनी भयानकता से जिज्ञासा को तीव्रता से जागृत करनेवाला है।

२. उपन्यास दु:खान्त होनेके कारण पाठकोंको ऐसा लगता है कि डा. खन्ना पर "देशद्रोही" का आक्षेप लगाना मिथ्या है। अंत लेखक के उद्देश्योंकी पूर्ति करनेवाला है।

३. दूसरे विश्वयुध्द में अंग्रेजोंकी युध्द नीति का समर्थन करने की भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की निती के कारण सारे देशमें इस दल को "देशद्रोही" ठहराया था। अपनी पार्टी को इस कलंक से रिहा करने के लिए यशपाल ने अंतमें उपन्यास नायक डा. खन्ना की मरणोन्मुख अवस्था का हृदय वर्णन किया है।

३. डा. खन्ना की कथा प्रधान कथा है, और बद्रबाबू, शिवनाथ, राज, राजाराम चंदा की कथाएँ प्रासंगिक कथाएँ है। कांग्रेसी सिध्दान्त और कम्युनिझम के सिध्दान्तों में भेद दिखाने के लिए ही इन प्रासंगिक कथाओं का निर्माण किया गया है।

४. राजाराम-चंदा की प्रासंगिक कथा के द्वारा लखकने स्त्रियोंपर होनवाले अत्याचार और दमननीति का यथार्थ वर्णन किया है।

५. कथावस्तु का पट भारत, गजनी, समरकंद और रूस से संबंधित है और वहाँकी आवेहवा का पुस्तक प्राप्य जानकारी पर किया यथार्थ वर्णन लेखक की अत्युच्च कल्पनाशीलता का सुन्दर उदाहरण है। विविध स्थलोंकी घटनाओंओ में स्वाभाविक रोचकता, रोमांटिकता और गति पायी जाती है।

६. कथा वस्तु में संयोगों, घटनाओं और परिस्थितियों प्राधान्य होनेके कारण कहीं कहीं कथासूत्र को जोडनेके लिएक इस्तमाल किये संयोग के प्रसंग अयथार्थ लगते है।

३] पार्टी कामरेड [१९४६]

प्रस्तावना —

यशपाल के राजनीतिकक उपन्यास -श्रृंखला की अंतिम रचना "पार्टी कामरेड", है। कलेवर में अत्यंत संक्षेप में होनेपर भी कथावस्तु के गहन, शैली और पात्र चित्रण की दृष्टी से यह रचना "देशद्रोही" की समता रखती है।

संक्षेप में कथावस्तु --

एक कालेज - छात्रा "गीता" कम्युनिस्ट पार्टी की सदस्या बन पार्टी के कोष्ठ के लिए धन-संग्रह करनेके प्रयत्न में रहती है। एक दिन "भावरिया" नामक एक कुसंगमि में फँसे बदनाम गुण्डे से उसकी मुलाकात होती है। मुलाकात बढ़ती है। परंतु पार्टी के लोगों के समझाने से वह भावरिया से मिलना-जुलना बन्द कर देती है।

एक दिन भावरिया उसे अपने अड्डेपर लेजाता है। वहाँ अपने दोस्तों द्वारा गीता का जब अपमान करता है तब बेडर होकर गीता उसे खरी खोटी सुनाती है, " मै आप को

ऐसा नहीं समझाती थी।"[१] गीता का यही वाक्य भावरिया के जीवन में गहरा परिवर्तन करता है। भावरिया का यह परिवर्तन अत्यंत मनोवैज्ञानिक है। वह अस्वाभाविक नही है।

देशभर में चुनाव का संघर्ष चल रहा है। वृत्तपत्रों में कम्युनिस्टों की निन्दा हो रही है। भावरिया यह देखकर चकित होता है। कांग्रेसी नेता भावजी का समर्थन सभी पक्ष करते हैं। राजनीतिक और सामाजिक स्थिति की अवस्था दयनीय है।

कांग्रेसी और कम्युनिस्ट अपने अपने जुलूस अलग रीति से निकाल रहे हैं। गुण्डे और बदमाशों की सहायता से एक दूसरे के जुलूसोंपर हमले किये जा रहे हैं। ऐसे ही कम्यूनिस्टोंपर किए एक हमले में भावरिया अचानक आकर गीता को बचाता है।

आजादी की पुकार से प्रभावित होकर देशी नौ-सेना के सिपाही अंग्रेजों के विरोध मे खडे होते हैं। नौ-सेना विद्रोह के प्रसंग से ही इस उपन्यास में संघर्ष का निर्माण किया है। सरकार उने उनका राशन बंद किया, लेकिन वे अपनी हडताल पर डटे रहे।

देशी सेना का विद्रोह आंदोलन कांग्रेस कर रही थी, और उनके पीछे कम्यूनिस्ट और सभी [illegible] विरोधी पार्टियाँ थी। सेना के हडताल को आधार देने के लिए मिलों में हडताल शुरु हुआ। जुलूस लालबाग पहुँचा ही था कि गोरों से भरी फौजी लारियाँ आयी और जुलूस पर यकायक गोलियोंकी बोछार शुरु हुआी।

---

१. पार्टी कामरेड : यशपाल : पृष्ठ

यह तमाशा भावरियादेख रहा था। वह इस जुलूस में था। वह अत्यंत उत्साह से घायल लोगोंकी सहायता में डटा रहा। लोगों को बचाने के प्रयास वह गोलियों से घायल हुआ। गीता की अंतिम भेंट के लिए व्याकुलता से वह उसका इन्तजार करने लगा।

"इधर गीता " मजदूर अस्पताल में भर्ती किये गये घायल मजदूरों की दिनरात सेवा करने लगी। गीता का छोटा भाई श्यामू उसे भावरिया के बारे में ब्योरेवार समाचार देता है। विवश गीता ड्युटीपर होने के कारण दूसरे दिन किसी तरह उसे मिलने जाती है, परंतु गीता की प्रमभरी दृष्टि का प्यास भावरिया उसके आने से पहले ही कम्युनिस्ट साथियों का लाल सलाम लेकर शहीद बन जाता है। यहीपर उपन्यास का दुखद अंत होता है।

कथावस्तु की शिल्पगत विशेषताएँ --

"पार्टी कामरेड" कथावस्तु अत्यंत संक्षिप्त और राजनीति पर आधारित है। इस कथा में कम्यूनिस्ट नीति कर आधारित है। इस कथा में कम्यूनिस्ट नीति का प्रचार ही यशपाल का प्रमुख उद्देश्य रहा है।

इस उपन्यास की कथा " १९४५ के आमचुनाव" और बम्बई के " नाविक विद्रोह" की राजनैतिक घटनाओं से संबंधित है। कथा का गठन छोटी छोटी घटानाओं द्वारा ऐसा बनाया है कि उसमें जोड कही भी नहीं दीख पडता। रेचकता और उत्सुकता लाने के लिए आकस्मिक घटनाओंका भी चित्रण किया गया है।

कथानक में सूत्रबध्दता एवं प्रवाह है। पात्रों का चयन भी स्वाभाविक और यथार्थ है। भावरिया का चरित्र परिवर्तन कथावस्तु को महत्वपूर्ण मोड देनेवाली घटना है। इससे कथावस्तु गतिमान और रोचक बन जाती है।

" देशद्रोही" तथा "दादा कामरेड" की तरह इस उपन्यास का अंत भी दिल को कचोटनेवाला है। शहीद भावरिया के न मिल पानेपर कम्यूनिस्टोंके कडे अनुशासन में बंधी गीता जल से बाहर निकाली मछली की तरह छटपटाती है। गीता के दिल का दुख इस प्रकार उमड पडता है, "सब लोगोंकी दृढता से बंधी मुठ्ठियां कंधो के ऊपर आकाश की ओर उठ गयीं। दांतोंसे होठ दबाये रहने पर भी गीता के आंसू बह रहे थे। मनके आवेग और शरीर की निर्बलता को वश में करने के प्रयत्न में उसकी दृढता से बंधी आकाश की ओर उठी मुठ्ठी कांप रही थी।"[१]

कथावस्तुका अंत इस प्रकार का करुणामय दिखाने के पीछे यशपाल के निम्न उद्देश्य प्रकट हो जाते है।

१. कम्युनिस्टों की अनुशासन प्रियता दिखाना जिस में प्रेम को स्थान नहीं है।

२. कम्यूनिस्टों के प्रति जनता में आदर का भाव निर्माण करना।

---

१. पार्टी कामरेड : यशपाल - पृष्ठ १३९

४] झूठा — सच

प्रस्तावना —

"झूठा-सच" यशपालजी के सभी उपन्यासों मे सर्वश्रेष्ठ रचना है। उसकी गिनती विश्व के दस महानतम उपन्यासों में की जाती है। इस उपन्यास का मुख्य विषय है - " जीवन का प्रेम "। देश के बँटवारे से उत्पन्न विषम स्थिति एक प्रकार की छोटी मोटी प्रलय ही थी - ऐसा प्रलय जिस मैं व्यक्ति अपनी सारी आस्था खो देता है। "झूठा-सच" का उद्देश्य व्यक्ति की खोयी हुअी आस्था उसे फिर लौटकर देना है। यशपाल की यह रचना हिन्दी की सर्वोत्कृष्ट यथार्थवादी रचना है।

संक्षेप में कथा वस्तु -- यह बृहद् उपन्यास दो भागोंमें विभाजित है।

१] वतन ओर देश [१९५८]

२] देश का भविष्य [१९६०]

वतन ओर देश

क] परिवारिक जीवन --

उपन्यास का प्रारंभ जयदेव पुरी के पिता राम लुभाया ओर उनके ताऊ रामज्वाया ओर उनके परिवार के परिचय से होता है। रामज्वाया रेलवे में पार्सल बाबू होने के कारण अच्छी आय करते है, परंतु मास्टर रामलुभाया को आर्थिक तंगी घेरे हुअे है। इसका प्रभाव जयदेव पुरी ओर उसकी बहन तारा पर भी पडता है। रामज्वारा की पुत्री का नाम शीलो है, जो अपने पडोसी गोविन्दाराम के पुत्र रतन से प्रेम करती है। तारा का विवाह दुश्चरित्र सोमराज साहनी से तय हो जाता है, परंतु व इस विवाह का विरोध करती है।

आर्थिक कठिनाइयोंका सामना करती हुई, तारा एम.ऐ. में प्रवेश लेती है। इधर एम.ऐ. की पढाई छोड जयदेव पुरी युध्द विरोधी आंदोलन में भाग लेता है, और मुसलमान की जेल में रहकर कहानियाँ लिखता है। साहित्य जगत में उसकी ख्याति हो जाती है। १९४५ में वह जेल से छूटता है। तारा को डॉ. प्राणनाथ के परिवार में टयूशन दिलवाकर स्वयं भी बाधावामल नारंग की पुत्री उर्मिला को पढानेका काम लेता है। उर्मिला के उद्दाम वर्तन के कारण उसकी टयुशन बंद हो जाती है।

अपने कहानियों के प्रकाशित होने के कारण जयदेव पुरी की बहुतही प्रशंसा हो जाती है। प्रयत्न करनेपर उसे "पैरोकार" मे सह.संपादक की नोकरी मिल जाती है। वहींपर "पैरोकार" के प्रकाशक पं. गिरिधरलाल की पुत्री कनक को पढानेका काम उसे मिलता है। पुरी और कनक में प्रमाकर्षण बढता है और दोनों भी विवाह-बंधन में बंधा जानेकी कसमें खाते हैं।

इधर तारा की भी टयूशन छूटती है। वह सोमनाथ से शादी करना नामंजूर कर देती है।

ख] राजनीतिक आंदोलन —

पाकिस्तान की माँग को लेकर सांप्रदयिकता भडक उठती है। इस बीच में तारा और असद में प्रेम बंधन टूट हो जाता है। पंजाब में खिजर मंत्रिमंडल समाप्त हो जाता है, और गवर्नर अपने हाथ में शासन की डोर ले लेता है। मुस्लिम लीग बॅरिस्टर जिना के नेतृत्व में "पाकिस्तान लेकर ही रहेंगे" का नारा लगाती है तो मास्टर तारासिंग के नेतृत्व में पंजाबी लोग "पाकिस्तान मुर्दाबाद" के नारे लगाते है। सांप्रदाईक दंगे अत्यंत प्रबल हो जाते है "पुरी" "पैरोकार"

में सांप्रदाइकता के विरोध में अग्रलेख लिखता है। इस लेख के कारण उसे नौकरीसे[redacted] हाथ धोना पडता है। इधर सांप्रदाइक दंगो में उर्मिला के पति का कत्ल हो जाता है।

"पैरोकार" से निकलकर पुरी, असद, हीरासिंह नरेन्द्रसिंह आदि कम्युनिस्ट कामरेडों का साथी बन जाता है। पुरी की आर्थिक स्थितिि दयनीय हो जाती है। कनक उसकी सहायता करना चाहती है परंतु वह उसे स्वीकार नहीं करता।

राजनीतिक स्थिति में फिर मोड आ जाता है, जून के पहले सप्ताह में पंजाब के विभाजन का निर्णय हो जाता है। मुसलमान लाहोर छोडकर भागने लगते है। मुस्लीम लीग भी पंजाब और बंगाल के विभाजन का प्रसताव मान लेती है। देश में चारों ओर हत्याओं और आगजनी घटनाओं का साम्राज्य फैल जाता है। पुरी फिर गिरफतार हो जाता है। कनक उपने जीजा नैय्यर की मदद से पुरी को छूटवाती है।

पुरी की बहन तारा का विवाह अखिार बदमाश सोमराज से होता है। सुहागरात के समय ही सोमराज तारा की बुरी तरह से पिटाई करता है। इतने में घरपर मुस्लिमों का हमला हो जाताहहै। तारा मुसलमान गुण्डे नब्बू के हाथ पड जाती है। नब्बू के यहाँ से वह हफी इनायत अली के घार ले जायी जाती है। हफीज का पुत्र [redacted] अजमद जो पुलिस इन्स्पेक्टर है वह उसे हिन्दू कैम्प में पहुँचाने का निश्चय करता है।

इसी बीच पुरी नौपुरी तलाश में कनक के कहने से लखनऊ गया था। वहाँ अवस्थी द्दारा मिले अभाद्र व्यवहार के [redacted] वह नैनिताल लोट आया। इधर उसे लाहोर की दुखाद घटनाओं की खाबर मिली और वह लाहोर आया। लाहोर में अपने परिवार वालों के लापता होने कारण वह उनकी खोज में निकला। रास्तेमें उसे नारंग के परिवार और विधावा उर्मिला से भेट हुओ।

इधर तारा को " हिन्दू कैम्प" के बहाने ऐसे स्थल में बन्द किया जाता है, जहाँ अन्य हिन्दू औरतें अत्यन्त असहनीय यातनाएँ सह रही हैं। तारा को भी उन नरक -यातनाओं को सहना पडा। संयोग से एक दिन "असद" पुलिस पार्टी के साथ आकर तारा सहित अन्य स्त्रियों को भी छुडवाता है। तारा अमृतसर भेज दी जाती है। तारा जिस जत्थे मे जा रही थी उसका नेतृत्व कौशल्यादेवी कर रही थी। वे अमृतसर पहुँचकर स्त्रियों को सान्तवना देती हुअी कहती है, --

" उतरो, अब तुम्हारा वतन तो छूटा पर अपने देश में अपने लोगों मे पहुँच गयी। परमेश्वर को धन्यवाद दो " [१]

तारा के मस्तिकष्क में " कौशल्या देवी के ये शब्द " वतन " और "देश" गूँजते रह जाते हैं।

इस प्रकार "झूठा सच " उपन्यास के प्रथम भाग "देश और वतन " के कथानक का उपसंहार करुणाजनक होता है।

...१०१

---

१. झूठा - सच : प्रथम भाग पृष्ठ २१८

देश का भविष्य [१९५० ई.]

विभाजन से उत्पन्न परिस्थितियों से विवश होकर पुरी इधर उधर भटकता फिरता है। उसे मुफत राशन दूकान से आटा-दाल लेना पडता है। उसे एक ढाबे में जाकर जूठे बर्तन तक माजने के लिए विवश होना पडता है। वह ढाबे से विश्वनाथ सूद के पास खाने की थाली लेकर जाता है। सूदजी उसे पहचानते हैं। सूदजी उसकी पूरी सहायता करते हैं, और उसपर उनके " कमाल" प्रस का प्रबन्ध सौंप देते हैं। इस प्रकार जालन्धर में पुरी को प्रेस का काम मिल जाता है। जालंधरमेंही पुरी का उर्मिला से फिर एक बार संपर्क हो जाता है। उर्मिला और पुरी में प्रमाकर्षण बढ जाता है, और वे एक दूसरे को समर्पण कर देते हैं। उर्मिला का परिवार उसे पुरी के पास छोडकर दिल्ली आता है।

इधर कनक पुरी के लिए चिंतीत थी। उसके पिता दिल्ली आये। कनक "सरदार" नामक अखबार में काम कर रही थी। परिस्थितियो से प्रतडित तारा भी मास्टरनी का काम करने की सोच रही है। तारा मिसेज आगरवाला के बच्चों को पढाने का काम करती है जहाँ वह नरोत्तम के संपर्क में आती है।

इधर विभाजन के पश्चात राजनीतिक घटनाओं का चक्र प्रारंभ हो जाता है। हिन्दू -मुस्लीम दंगोको देखकर गांधीजी आमरण अनशन कर देते है। कश्मीर पर पाकिस्तान का आक्रमण होता है। पाकिस्तान को ५५ करोड रुपये दिये जाने के प्रश्नपर जनता तथा सरदार पटेल आदि नेता नारज हो जाते है।

तारा मिसेज अगरवाल के उपेक्षामय व्यवहार से तंग आकर एक दूसरी नोकरी ढूंढती है और नैसी नामक सहेली के यहाँ वह रहने लगती है। नैसी का घर कम्यूनिस्टों का अड्डा था। मिस्टर अगरवाला तो सफेद - पोश कांग्रेसी आदमी थे जो अधिकारियों से मिले रहकर मालामाल हो गये थे। नरोत्तम को इस व्यवहार में रस नहीं है। वह तारा से विवाह का प्रस्ताव भी करता है, परंतु तारा उसे अस्वीकार कर देती है वह तारा को बहन के रूप में स्वीकार कर उसकी सहायता करता रहता है। शीलो रतन के साथ भागकर आती है। तारा उसे आश्रय देती है। पुरी समाज की मर्यादा को तोडनेवाली शीलो को आश्रय देने में विरोध करता है। वह अपने स्वार्थ के कारण तारा को सोमराज के विरुध्द जाने की मनाही करता है।

पुरी की मतलबी वृत्ति के कारण कनक के साथ उसके मतभेद हो जाते हैं। पुरी प्रतिक्रियावादी होने के कारण वह समाज के क्रान्तिकारी परिवर्तन में आस्था नहीं रखता। वह सूद के साथ अपने समाजवादी आदर्शों में आस्था नहीं रखता। कनक उबकर उससे तलाक लेती है।

तारा की दिल्ली में डॉ. प्राणनाथ से मुलाकात होती है। तारा और प्राणनाथ विवाह-बन्धन में बँध जाते हैं। इधर सूदजी इलेक्शन की तैयारियों में जुटे हुए हैं। इलेक्शन में जीतने के लिए वे अनेक भ्रष्ट मार्गों से अपनी पार्टीवाले लोगों की सहायता करते रहते हैं। इधर कनक भी प्रीतमसिंग गिल से विवाह करती है।

इलेक्शन में सूदजी १७००० मतों से पराजित होते हैं। डॉ. प्राणनाथ गिल के सामने अपनी प्रतिक्रिया इस प्रकार व्यक्त करते है, "अब तो विश्वास करोगे जनता निर्जीव नहीं है जनता सदा मूक भी नहीं रहती। देश का भविष्य नेताओं तथा मंत्रियों

की मुठ्ठियोंमे नही है, जनता के हाथ में है। "[१]

संयोग की बात है लेखक का यह भविष्य भारत की वर्तमान राजनीति के संदर्भ में स्वयं सिध्द है। इस प्रकार उपन्यास के दूसरे भाग का उपसंहार सुखात्मक है। समाजवादी व्यवस्था के रूप में उज्जवल भविष्य का संदेश इससे मिलता है।

कथावस्तु की शिल्पगत विशेषता —

"झूठा-सच" उपन्यास सन १९४७ से लेकर सन १९५७ तक की राजकीय घटनाओंका यथार्थ अभिलेख है। इस में देश के विभाजन के समय घटी अमानुष घटानाएँ, शरणार्थी समस्या, कांग्रेसी नीति की असफलता और समाजवादी समाज-रचना का उज्ज्वल भविष्य कई प्रेम-कथाओं के माध्यम से चित्रित किया हुआ है। इस के विस्तृत घटना-पट के कारण यह महाकाव्यात्म उपन्यासों के श्रेणी में आता है। राजनीतिक वातावरण के चित्रणमें नेहरू, पटेल, जिन्ना, आदि नेताओं के संदेभों के कारण घटनाएँ अवास्तविक नही लगती।

प्रमुख कथा गरीब परिवार के भाई-बहन पुरी और तारा की है। देश के विभाजन के बाद दोनों पर क्या क्या आ बीतती है, और अंत में दोनों का जीवन कैसे सुस्थिर हो जाता है, यह इस उपन्यास में राजनीतिक पृष्ठभूमिर चित्रित किया है।

मुख्य कथा के साथ कनक, सोमराज, उर्मिला, नरोत्तम सूद, प्रीतमसिंग गिल, असद, और डा. प्राणनाथ आदि की उपकथाएँ चलती रहती हैं। विभाजन के कारण इन पात्रों से संबधित कथा-सूत्र भी अपने स्थान से बिखरे हुये लगते हैं। लेखक ने अंत में इन मात्रोंको एक जगह लाया गया है। यही यशपाल की कलात्मक

---

१. झूठा सच : दूसरा भाग : यशपाल : पृष्ठ -४०८

जादूगरी है।

झूठा-सच मूलत: घटना-प्रधान उपन्यास है। इ.सन १९४७ में देश में बटी राजनीतिक घटनाओं तथा उनके परिणाम और भविष्य ही कथानक की आधार-शीला है।

उपन्यास का प्रारंभ चित्ताकर्षक है और अंत लेखक के उद्दिष्ट को सफल करता हुआ नाटकीय रीति से हुआ है।

उपन्यास की घटनाओं में नाटकीय वक्रता, नाटकीय संदेह और आकस्मिक कई जगह पायी जाती है। कई जगह पात्रों के मानसिक संघर्ष के कारण कथा की रोचकता बढ़ी गयी है। वास्तव में झूठा-सच के दोनों भी भाग प्रवाह-पूर्ण, सूत्र-बध्द, रोचक और प्रभावी होने के कारण उसका महत्व अक्षुण्ण है।

२) सामाजिक उपन्यास

अन्य उपन्यासें की अपेक्षा यशपाल के सामाजिक उपन्यासों की संख्या अधिक है। हरएक उपन्यास में आपने मार्क्सवादी विचारों का दर्शन एक प्रेमकथा के माध्यम से हमारे सामने उद्घाटित किया है। यशपाल की सामाजिक प्रतिबध्दता, मार्क्स प्रणीत समाज का स्त्री-स्वातंत्र्य, प्रेम, विवाह, आदि के कुशल रेखांकन में पायी जाती है।

१. मनुष्य के रूप [१९४९]

प्र स्ता व ना --

यह उपन्यास पूर्णत: सामाजिक उपन्यास है। मनुष्य क्या है ? उसके कितने रूप हो सकते हैं ? इन प्रश्नों का समाधान इस उपन्यास में किया हुआ है। उपन्यास का कथानक कांगडा के सुन्दर पहाडी

प्रदेशों से लेकर बम्बई के व्यस्त एवं संघर्षमय जीवन तक फैला हुआ है। यशपाल ने इतने बड़े कथापट में राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा नैतिक — समाज की समूची समस्याओं को लपेटा है। साथ ही साथ ऊपरी चमक-दमक से जगमगानेवाले भ्रष्ट और हीन फिल्मी जीवन की झलक भी दिखाई देती है।

संक्षेप में कथावस्तु :—

उपन्यास की मुख्य कथा का प्रारंभ कांगड़ा की पहाड़ी सड़क पर, उसी प्रदेश में रहनेवाली विधवा सोमा और उसी पहाड़ी इलाके में ट्रक चलानेवाला ड्राइवर धनसिंह के आकस्मिक संयोग से होता है।

विधवा सोमा जेठानी और सास के अत्याचारों से तंग आकर एक दिन धनसिंह के साथ भाग जाती है। धनसिंह अंधेरे में शहर ले जाता है। यहींपर पुलिस की नजर इस जोड़े पर पड़ती है और दोनों को पुलिस अपने हिरासत में लेती है। धनसिंह की पुलिस के साथ मारपीट होती है, और धनसिंह को कैद हो जाती है। धनसिंह के जेल से छूटने तक कामरेड भूषण उसके रहने का प्रबंध एक भद्र व्यक्ति लाला ज्वाला सहाय की कोठी पर कर देता है।

लाला ज्वाला सहाय की इकलौती बेटी मनोरमा, जो एम.ए. की छात्रा है, भूषण के प्रति आकर्षित भी है। इन दोनों के प्रेमाकर्षण के कारण सोमा को मनोरमा के घर में आसरा मिलता है। जेल से छूटने के बाद धनसिंह मनोरमा के यहाँ टॅक्सी ड्राइवर हो जाता है। सोमा और धनसिंह का जीवन फिर सुखमय हो जाता है। सोमा और धनसिंह का जीवन फिर सुखमय हो जाता है।

एक रात गली के गुण्डे सोमापर अश्लील फब्तियाँ कसते देखते ही धनसिंह उनकी बुरी तरह पिटाई करता है। उसमें से एक को मरा हुआ देखते ही वह रात्रि के अंधेरे में भाग जाता है। बेचारी सोमा फिर अकेली ही रह जाती है।

परिस्थितियों के साथ अपने आप को समेटती हुई सोमा, बैरिस्टर जगदीश सरोला साहब की पत्नी सावित्री देवी और मनोरमा के साथ लाहोर जाती है।

इधर धनसिंह पुलिस से बचता हुआ सीधा होशियारपुर की धर्मशाला में शरण लेता है। वहाँ से सीधा दिल्ली जाकर वहाँ के अंग्रेजी विरोधी देशभक्तों के जुलूस में शामिल होता है। जुलूसवाले सभी देशभक्तों के साथ वह भी फिर से राजबन्दी के रूप में जेल में बन्द होता है। वहाँ के वातावरण के प्रभाव में रहकर वह भी पक्का देशभक्त बन जाता है। एक दिन धनसिंह, नेताजी सुभाष बाबू के भाषण से प्रभावित होता है, और आजाद हिन्द सेना में भर्ती होता है।

लाहोर के स्वतंत्र और आधुनिक वातावर के कारण सोमा का देहातीपन समाप्त हो जाता है। मिसेज सरोला अपने घर का सारा कारोबार सोमा पर सौंप देती है। सोमा बैरिस्टर सरोला साहब के अहसानोंका मूल्य अपने समर्पण की कीमत देकर चुकाती है। मालिक की रखैल होने के कारण सभी नौकरों में उसकी कद्र होती रहती है। उसे मालकिन कहकर सभी पुकारते है।

भूषण जेल से छूटता है। मनोरमा और भूषण के विचारों में विभेद हो जाने के कारण दोनों में अनबन पैदा होती है। मनोरमा भी हैदरजी सुतलीवाला नामक एक लखपति से प्रति आकर्षित होती है। बैरिस्टर साहब का ड्राइवर बरकत भी सोमापर डोरे डालता है, परंतु सोमा के अपमान करनेके कारण वह बदला लेनेकी फिक्र में रहता है।

बैरिस्टर साहब के पुत्र के मुण्डन के समारोह में सोमा का यह नाजायज अधिकार अन्य भाभियाँ सह नहीं सकती। सोमा और बैरिस्टर के चरित्रपर उँगलियाँ उठाकर सोमा को घर से हकाल देने में वे कामयाब होती है।

घरकी उत्तरोत्तर बिगडती स्थिति से तंग आकर मनोरमा सुतलीवाला के साथ रजिस्टर्ड विवाह करती है। परंतु सुतलीवाला जैसे अति व्यवहारी पति को पाकर मनोरमा का मन मनमुटाव और द्वेष से भर जाता है। बम्बई में मनोरमा की मुलाकात फिर डॉ. भूषण से होती है। भूषण की सहायता से मनोरमा सार्वजनिक कार्यों में रस लेती है। स्वयं नपुंसक सुतलीवाला जब एक रात सोमा को एक फिल्म प्राडयुसर की हमबिस्तर होने की सलाह देता है, तब वह उसका विरोध करती है और उससे तलाक लेने का निश्चय करती है।

इधर बैरिस्टर के घरसे निकाली सोमा को बरकत ड्रइवर का सहारा मिलता है। वह उसे बम्बई ले आता है उसकी मारपीट करता हुआ वह उसे फिल्म कंपनी में नौकरी करनेपर मजबूर करता है।

फिल्म कंपनी में सोमा का सितारा चमक उठता है। वह "पहाडन" के नामसे मशहूर फिल्म अभिनेत्री बन जाती है। प्रोडयूसर सुतलीवाला की "गरीब की आह" फिल्म की वह नायिका बन जाती है। सुतलीवाला की सज्जनता देख वह उसकी ओर आकर्षित हो जाती है।

सुतलीवाला अपनी पत्नी मनोरमा को तलाक देकर पहाडन के साथ शादी करता है। एक दिन अत्यंत नाटकीयता से सोमा का साक्षात्कार मनोरमा से होता है। यह नाटकीय और अप्रत्यक्षित संयोग सोमा को तीव्राघात पहुँचाता है। मनोरमा को भी आभास होता है कि एक व्यक्ति [सोमा] के कितने रूप हो सकते हैं।

धनसिंह भी जीवन की उबड-खाबड खाइयोंसे गुजरता हुआ बम्बई पहँचता है। बम्बई में वह सिनेमागृहों के पोस्टरोंपर लगे सोमा के चित्र को देखकर उसे मिलने के लिए आतुर हो जाता है। भूषण की सहायता से वह सोमा के द्वारतक पहुँचने का निष्फल प्रयत्न करता है। बरकत और धनसिंह की मुठभेड में भूषण बीचमें आता है, और वह इतना घायल हो जाता है कि उसकी स्थिती मरणासन्न हो जाती है। भूषण की अस्पताल में मृत्यु होती है। धनसिंह फिर जेल जाता है। बेचारी मनोरमा फिर अपने भाग्य से हाथ धो बैठती है। यहींपर ही उपन्यास समाप्त होता है।

कथावस्तु की शिल्पगत विशेषताएँ --

कांगडा के पहाडी प्रदेशों से बढती हुई यह कथावस्तु कानपुर, लाहोर से बम्बई में आकर समाप्त होती है। कथावस्तु का प्रारंभ नाटकीय और अंत दिल को व्यथित करनेवाला है।

प्रमुख कथा "सोमा" की ही है। सोमा परिस्थितीयों और घटनाओं के भँवरों में फँसकर नाना रूप धारण करती हुई अंत में "पहाडन" के रूप में बम्बई में स्थिर हो जाती है।

भूषण और मनोरमा की कथा प्रासंगिक कथा के रूप में आदि से अंत तक प्रमुख कथा के साथ कहीं अलग स्वतंत्र रूप में तथा कहीं उसके सहायक रूप में चलती है।

सोमा का कई जगह आत्मसमर्पण, सुतलीवाला और मनोरमा के अनमेल विवाह के कारण उत्पन्न मनोरमा का मानसिक संघर्ष, सुतलीवाला के घरमें सोमा का मनोरमा के साथ हुआ साक्षात्कार-प्रसंग तथा भूषण की आकस्मिक मृत्यु का प्रसंग -- ये प्रसंग पाठकोंके दिलोंको झकझोरनेवाले और सशक्त प्रसंग हैं।

धनसिंह और मनोरमा के साथ कथावस्तु के प्रसंगोंने कभी न्याय नहीं दिखाया है। धर्मसिंह चाहकर भी सोमासे नहीं मिल सकता और मनोरमा चाहकर भी का. भूषण को अपना बना नही पाती।

कथावस्तु में परिस्थितियों को श्रेष्ठ मानकर सभी पात्र कठपुतलियों की तरह परिस्थितियों के इशारोंपर नाचनेवाले दिखाए है। अन्य उपन्यासों की तरह इस उपन्यास के पात्र परिस्थिति पर हावी नही हो जाते।

कथावस्तु में प्रबल वेग, एवं मार्क्सवादी यथार्थता के प्रकट चित्रण होने कारण प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु समर्थ एवं सशक्त बन गयी है।

२. बा र ह घ ण्टे (१९६२)

प्रस्तावना :--

विषय तथा शैली की दृष्टि से प्रस्तुत लघु उपन्यास एकदम अभिनव है। इसमें राजनीतिक तथा सामाजिकता के दर्शन का अभाव सा दीख पडता है, परंतु मनोविज्ञान का आधार लेकर भारतीय समाजकी विवाह तथा प्रेमकी परंपरागत मान्यताओंपर यशपाल ने कुठाराघात करके इन मान्यताओंके बारेमें अपना स्वस्थ और प्रगतिशील दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। इस दृष्टि से देखा जाए तो प्रस्तुत उपन्यास "सामाजिक उपन्यासों" की कोटि श्रृखला में गिना जा सकता है।

संक्षेप में कथा वस्तु —

अपने प्रिय तथा प्रियतमा के विरह में तडपनेवाले एक विधवा और एक विधुर की यह एक मनोवैज्ञानिक कहानी है। उपन्यास की नायिका "विनी" अपने मृत पति "रोमी" की समाधि पर अपनी यादगार के कुछ फुल चढानेके लिए नित्य नैनिताल की सेमेण्ट्री आती है। उसी प्रकार नायक "फेटम" भी अपनी पत्नी "सैली" की यादगार में अन्यमनस्कता नैनितार की उसी ईसाई स्मशान भूमि में आता रहता है।

एक दिन दोनों विरही जीव एक ही समय अपनी अपनी दुखद स्मृतियों में खोये हुऐ से सेमेण्ट्री में आते हैं। जोरों की वर्षा के कारण उन्हें सेमेण्ट्री में ही रुकना पडता है। यहींपर वे मौन भाषा में ही एक दूसरोंका दुख समझ लेते हैं। विनी अपने पति रोमी के झील में डूबकर हुऐ हृदयद्रावक अंत की करुण कहानी फेटम से कहती है और फेटम भी अपनी प्रिय पत्नी सैली की टी. बी. से हुई मृत्यु की करुण कहानी विनी से कहता है।

इस प्रकार संयोगवश दोनों समदुःखी एक जगह आते हैं, एक दूसरे के सामने अपना दिल खोलते हैं, और अन्जाने में सहारे के लिए एक दूसरे की ओर ताकते हैं।

यह आकर्षण दोनों के अनुकान्शास मन में इतना बढ जाता है कि बिनी अपना पुराना प्रेम छोड फेटम को सहारा देनेके लिए उसके साथ जीवन बिताने के लिए तैयार होती है, और फेटम भी बिनी का साथ स्वीकार करता है। इधर बिनी की बहन जेनी, जिसके यहाँ बिनी ठहरती है, उसके इस अप्रत्याशित परिवर्तन को हेय समझकर उसका उपहास करती है। लेकिन बिनी का यह निर्णय लारेन्स नामक एक प्रगतिशील पुलिस सुपरिटेंडेंट योग्य समझता है। लारेन्स के माध्यम से लेखक ने अपने प्रेम और विवाह से संबंधित मार्क्सवादी विचार प्रस्तुत उपन्यास में प्रकट किये हैं। उपन्यास के अंत में दोनों विरही जीवों का सुखद मिलन ही उपन्यास को सुखान्त बनाकर पाठकों के मन में एक नया सामाजिक और प्रगतिशील विचार उदित करता है।

कथावस्तु की शिल्पगत विशेषता --

कथावस्तु सिर्फ १२ घण्टेमें समाप्त होनेवाली लघुतम कथावस्तु है। सुबह साडे आठ से शाम साढे आठ तक के लघु समय में लेखक ने अत्यंत कलात्मकता से बिनी और फेटम के मनोवैज्ञानिक चित्रण द्वारा विधवा एवं विधुर की सामाजिक समस्या का कुशल अंकन किया है। विधवा एवं विधुर को अपने गत प्रेमी के विरह में तडपकर अपना जीवन बरबाद करने की अपेक्षा फिर से प्रेम-विवाह करके नया जीवनारंभ करना चाहिए यह प्रस्तुत कथावस्तु का प्रगतिशील उद्देश्य है।

कथावस्तु का प्रारंभ बिनी तथा फैटम जैसे विरहियों को सेमेण्ट्री में अपने अपने प्रिय की कबरों के पास दिखाकर एक रहस्यमयी जिज्ञासा निर्माण की है। मध्ये में दोनों का मानसिक संघर्ष अमार्याद भावुकता से चित्रित किये जानेके कारण कथावस्तु और अधिक रहस्यमयी एवं औत्सुक्यपूर्ण बनायी है। बीच बीच में जो दार्शनिक परिचर्चा छेडी है वह कथावस्तु का रसभंग अवश्य करती है परंतु अपने मतों का प्रचार करनेकी उपन्यासकार की आदत के कारण यह हो चुका है। उपन्यासकार ने यहांपर संयम से काम लिया है।

कथावस्तु के अंत में फैटम और बिनी का मनोमीलन दिखाकर कथावस्तु को सुखान्त और आशादायी बनाया है। बीच बीच में संदेश देता हुआ लेखक का मन पुलिस अफसर लारेन्स के लम्बे भाषाणोंके माध्यम से हमें दीख पडता है।

बारह घण्टोंमें घटनेवाली लघु कथावस्तु होने के कारण उपकथाओंको कोई स्थान नहीं है। कथावस्तु नैनिताल में शुरू होती है, वहांकी सेमेण्ट्री में घटती है और नैनिताल में ही समाप्त होती है।

बीच बीच में आये पहाड प्रदेश, वर्षा और तुफान के वर्णन कथावस्तु को रोचक, यथार्थ और रहस्यमयी वातावरण की निर्मिती में सहायक बन गये है।

कथावस्तु की गति क्षिप्र है, और अपने उद्देश्य की ओर सीधी पहुंचनेवाली होने के कारण असरकारी बन गयी है।

३. अप्सरा का श्राप [१८६५]

प्रस्तावना —

प्रस्तुत उपन्यास का कथानक यशपाल ने महाभारत से लिया है, परंतु उसी कथानक को नये मार्क्सवादी सिध्दान्तों के रूप में ढालनेका सफल प्रयास भी किया है। विश्वामित्र का तपोभंग स्वर्गीय अप्सरा "मेनका" व्दारा होता है। विश्वामित्र का तपभंग होनेके बाद उनके मिलन से प्रत्युत्पन्न शाकुन्तला और दुष्यन्त की प्रचलित कहानी को यशपाल ने इस उपन्यास के लिए चुना है। उसी पुरातन आख्यान को लेखकने आधुनिक दृष्टि से देखनेका प्रयास किया है। स्वयं यशपाल का ही इस बारे में कथन है, " पुरातन आख्यान को आधुनिक दृष्टि से प्रस्तुत करने का अभिप्राय है, पुरुष व्दारा युग युग से निरंकुश स्वार्थ को प्रमाद में धर्म और व्यवस्था के नामपर नारी के निर्दयी शोषण के प्रति ग्लानि।" [१] इस से आधुनिक नारी के व्यक्तित्व तथा आत्मनिर्भरता की भावना के प्रति सहानुभूति व्यक्त की गयी है। यशपाल का यह निजी दृष्टिकोण है।

संक्षेप में कथावस्तु --

कथा के प्रारंभ में शाकुन्तला के जन्म की कथा है। "ब्रह्मर्षि " पद की प्राप्ति के लिए अखंड तप करनेवाले महर्षि विश्वामित्र को वह पद देना जब देव अस्वीकार करते हैं, तब चिढकर विश्वामित्र दूसरी सृष्टि निर्माण करने के लिए प्रखर तप करते है। इससे इन्द्र चिंतित होते है। और विश्वामित्र

---

१. अप्सरा का श्राप : आमुख : यशपाल

के तपस्खालन के लिए अप्सरा मेनका को पृथ्वीपर भेज देते हैं। अपने स्वर्गीय रूप की मोहिनी विश्वामित्र पर डालकर अप्सरा उनका तपोभंग कर देती है।

विश्वामित्र से वह एक कन्याको जन्म देकर फिर वापस स्वर्ग में चली जाती है। इधर विश्वामित्र को जब अपनी गलतीपर पछतावा होता है तब वे इस कन्या को कण्व मुनि के आश्रम के पास "शाकुन्तों" में रखकर चले जाते हैं। "शाकुन्तों" में प्राप्त कन्या को कण्व मुनि "शाकुन्तला" की संज्ञा देकर आश्रम में उसका संगोपन अपनी बेटी की तरह अत्यंत लाड प्यार से करते हैं।

शाकुन्तला सयानी होनेपर एक दिन राजा "दुश्यन्त" की नजर इस "बनफूल" पर पडती है। आँखे चार हो जाती है और शाकुन्तला दुश्यन्त का मा माता गोतमी के सामने गांधर्व-विवाह होता है। दुश्यन्त गोतमी को यह आश्वासन देकर ही शाकुन्तला से विवाह करता है, "उसका शाकुन्तला से उत्पन्न पुत्र ही आर्यावर्त के सिंहासन का उत्तराधिकारी होगा।" वह जाते समय अपनी यादगार "मुद्रिका" उसे देता है और एक मास में उसे अपने साथ ले जाने का वादा करके चला जाता है।

चार मास बीतने पर भी जब शकुन्तला के राजधानी को जाने की कोई खबर दुश्यन्त से न आती देख गर्भिणी शकुंतला चिंतित होती है। महर्षि दुर्वासा भी उसे पतिगृह भेज देने की सलाह देते हैं। शाकुन्तला राजा का स्मृति-चिन्ह "मुद्रिका" लेकर राजा के सामने उपस्थित होती है, परंतु राजा उसे नहीं पहचानता। राजा की प्रताडना से घायल शाकुन्तला वापस अपने मैके, आश्रम जाना अपने आत्मभिमान के कारण, न स्वीकार कर किन्नरी की संगति में स्वतंत्र जीना पसंद करती है।

इधर आर्यावर्त में दुष्यन्त की प्रथम पत्नी के गर्भ से निष्प्राण बालक का जन्म होता है। इस घटना को उस तपोवन-बाला[शकुन्तला] का श्राप समझ राजा उव्दिग्न होता है। राजा को खोई मुद्रिका भी मिलती है और शकुन्तला के विरह में राजा निरन्तर तडपता रहता है। बीमार राजा, उपचार के उपरान्त देवों की सहायता के लिए स्वर्ग चला जाता है। देवलोक से वापस आते समय वह कश्यप मुनि के दर्शनार्थ उनके आश्रम जाता है। वहींपर अत्यंत नाटकीयता से उसकी शकुन्तला से भेंट हो जाती है। शकुन्तला की माँ मेनका उसे राजा को छोडकर स्वतंत्र जीवन जीने की सलाह देती है, परंतु शकुन्तला अपनी माँ "मेनका" की सलाह को ठुकराकर पतिधर्म की रक्षा के हेतु राजा के साथ जाना स्वकार करती है। उसकी माँ मेनका उसे "एवमस्तु" श्राप देकर स्वर्ग जाती है। यहींपर उपन्यास समाप्त होता है।

कथावस्तु की शिल्पगत विशेषता --

कथावस्तु का प्रारंभ कथोपकथनात्मक होने के कारण नीरस नहीं लगता। प्रारंभ से ही पाठक की जिज्ञासा तीव्र गति से बढ जाती है।

मध्य में शकुन्तला और दुष्यन्त के मानसिक संघर्ष के कारण रोचकता और प्रभावात्मकता आयी है। शकुन्तला के माध्यमसे स्त्रियों का पुरुष व्दारा की प्रताडना को लेखकने कुशलतासे प्रकट किया है।

अंत मे अप्सरा मेनका के श्राप के माध्यम से लेख ने समूची कथावस्तु को एक नया मार्क्सवादी मोड दिया है। नारी को आत्मसमानी और स्वतंत्र रहना चाहिए यह स्वर्गीय अप्सरा मेनका के चित्रण व्दारा लेखकने बताया है।

पुराण की "शाकुन्तलाख्यान" की कथा को मार्क्सवादी क्रान्तिकारी विचारों का पुट देने का लेखक का इस संक्षिप्त कथावस्तु के पीछे स्तुत्य और सफल प्रयत्न रहा है।

४. क्यों फँसे [१८६८]

प्रस्तावना --

लेखक के पूर्ववर्ती और अनुवर्ती उपन्यासों के विषयों से एकदम विभिन्न विषयपर प्रस्तुत लघु उपन्यास की रचना की है। सामाजिक प्रतिबध्दता माननेवाले यशपाल जैसे सिध्दहस्त लेखकने "मुक्त योनाचार" की पाश्चात्य मान्यता को हमारे देश की पार्श्वभूमिपर चित्रित करनाऔर उसे यथार्थ की संज्ञा से विभूषित करना पाठकों की प्रवंचना मात्र लगता है।

संक्षेप में कथावस्तु :--

लुधियाना के कपडे के व्यापारी परिवार में पला भास्कर नामक एक प्रगतिशील विचारों वाला युवक अर्थशास्त्र में एम.ए. करने के बाद केवल शौक के लिए पत्रकारिता का कोर्स पूर्ण करता है। सिमला में किसी सरकारी नौकरी के लिए इन्टरव्हयू अटेंड करने के लिए वह जाता है। वहींपर उसकी जवान और बदनीयत मामी के साथ उसके नाजायज संबंध आते हैं। इन संबंधों से उबकर वह केंद्रीय प्रकाशन विभाग में अपनी अस्थाई नौकरी पर दिल्ली आकर रूजू होता है।

अपनी "मामी के सुखाद आगोश में रहने के कारण भास्कर को भी नित्य नयी लडकियों के साथ मुक्त योनाचार करनेकी आदत लगती है। प्रकाशन-विभाग में उसके मन में "बदरुन्निसा" नामक लडकी गड जाती है। परंतु वहाँ दाल न गलती देख वह उसे

"भाड में जाय स्साली बंदरिया" [१] कहकर उससे संबंध तोड देता है। दिल्ली में भास्कर एक निवृत्त कर्नल के बंगले में "पेंइंग गेस्ट" के रूप में रहता है। वहाँपर उत्तर प्रदेश के स्वास्थ्य विभाग की ओर से कुछ प्रमोशन कोर्स करने के लिए आयी डॉक्टर मिश्र से उसका परिचय बढ जाता है। सिनेमा, होटल आदि के बाद भास्कर और डॉ. मिश्र. मिश्र.के कमरे में मिल जाते हैं तब शादी का वायदा माँगते ही भास्कर उसे स्वार्थी समझकर उससे दूर हटता है। भास्कर के शादी, विवाह और प्रेम के बारे में बिल्कुल पाश्चात्यों जैसे प्रगतिशील विचार है। शादी की दलदल में जीवनभर फँसने का वह विरोध करता है। शादी के लिए प्रथम प्रेम फिर एक दूसरे को पहचानना और फिर शादी इस प्रकार का भास्कर का प्रेम और विवाह का सूत्र है। उसे स्वयंस्फुरित आकर्षणयुक्त युवती की चाह है, जीवन भर पत्नी रूप में बँधानेवाली युवती की नहीं।

अपने ऑफीस के एक मित्र अरुण मित्रा की ड्युटीपर एक दिन भास्कर को कलकत्ता की आर्ट गॅलरी देखने का मौका मिल जाता है। वहाँ उसकी "मोती" नामक एक महिला आर्टिस्ट से मुलाकात होती है। वह उसकी प्राप्ति के लिए उसकी कला की प्रशंसा के पुल बाँधता है। धीरे धीरे मोती के पति के साथ उसकी दोस्ती हो जाती है। मोती भी उसकी ओर अत्यंत तीव्र आकर्षण से खींची जाती है। वह उसे आलिंगन चुबन तक के ही प्यार की ही अनुमति देती है। कई बार भास्कर उसे समूची पाने के लिए उसकी नाभी के नीचे तक फिसलनेका प्रयास करता है, लेकिन प्रत्येक बार मोती भास्कर के उस इरादेको

---

१. क्यों फँसे : यशपाल : पृष्ठ ३३.

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

भाँपतेही चिल्लाती हुअी उठकर भाग जाती है। भास्कर की उफनाती हवस का वह इन्कार भी नहीं कर सकती और उसे एक सीमित हद के बाहर बढ़ने भी नहीं देती।

कुछ महिनोंपरान्त मसूरी में भास्कर की मोती से अचानक मुलाकात होती है। मोती अपनी गलती पर पछताती हुअी सुबह भास्कर के होटल पर मिलने का वादा करके चली जाती है। संयोग वश उसी रात "हेना" नामक अत्याधुनिक युवती से भास्कर की मुलाकात होती है। भास्कर उसे खिलाता-पिलाता है, अपने कमरे में ले जाता है और वह भी अत्यंत खूबी से भास्कर को साथ देती है। किसी प्रकार की अशा रखे बिना "हेना" का यह समर्पण भास्कर को संतोष देता है। सुबह जैसे ही "हेना" कपडे करके निकलती है, वादे के अनुसार "मोती" उसी क्षण प्रवेश करती है। "हेना" को बाजारु समझकर अत्यंत क्रोध से वह उसे हकाल देती है। हेना भाग जाती है। केवल "मोती" के खींचे रहनेके कारण ही भास्कर "हेना" के प्रति झुका, ऐसा भास्कर कहता है। "मोती" तैश मे आकर उसके सामने नंगी हो जाती है, और अुसके गले में लटककर कहती है ", " मार डालो, मार डालो मुझे। किसी रण्डी को छूने नही दूँगी।"[१] "हेना" को मोती व्दारा "रण्डी" कहकर संबोधित करना, उसे "कॉल गर्ल" तथा "बाजारु" और समझना भास्कर को अच्छा नही लगता। निरपेक्ष वृत्ति से किया हुआ "हेना" का समर्पण "नारी को सदा संपत्ति या अपनी तफरही का सौदा ही समझना अन्याय नहीं तो क्या है? आत्म विश्वासी, आत्म-निर्भर नर नारी को क्यों फँसाएँ?. क्यों फँसे?" [२] उपन्यास का अन्त यहींपर है।

---

१. क्यों फँसे : यशपाल : पृष्ठ ११९.

२. क्यों फँसे : यशपाल : पृष्ठ १२४

कथावस्तु की शिल्पगत विशेषता --

लुधियाना - दिल्ली - कलकत्ता - मसूरी आदि स्थानों पर अपने यौन-शौक को पूरा करनेके लिए सरकारी नौकरी की आड में घूमनेवाले भास्कर नामक युवक के चारों ओर समूचा कथापट घुमता रहता है।

कथावस्तु का प्रारम्भ कला प्रदर्शनी में मोती-भास्कर की नाटकीय मुलाकात से हुआ है। मध्य में भास्कर का संबंध कई स्त्रियों के साथ दिखाया है, इन संबंधोंको भास्कर अपने प्रगतिशील विचारों की कसौटी पर कसकर ही स्थिर करता हुआ सा नजर आता है। अंत में "हेना" जैसी निरपेक्ष कॉलगर्ल के प्रेम को आदर्श मानकर भास्कर संतोष की सांसे लेता हुआ नजर आता है।

कथावस्तु के पात्र भिन्न स्वभाववाले नही हैं। सभी एक ही यौन-तृप्ति की प्यास से भरे है। इसीके कारण कथावस्तु में रोचकता नहीं रही है।

कथावस्तु मौलिक है परंतु पुनैया के लम्बे दार्शनिक भाषण कथावस्तु की गति को शिथिल बना देती है। कथावस्तु के प्रसंग संयोगों से भरे रहनेके कारण कथावस्तु अविश्वासनीय लगती है। एक नायक का कई स्त्रियों के साथ मिलना अप्रासंगित, अप्रस्तुत और कृत्रिम सा लगता है।

कुल मिलाकर कथावस्तु का चयन पाश्चात्य विचारों से अभिभूत होने के कारण कथावस्तु थोपी हुअी सी लगती है।

५. मेरी तेरी और उसकी बात [१९७४]

प्रस्तावना --

यशपाल के उपन्यास मंदिर की अंतिम पायदान है। इ. स. १९१४ से लेकर इ. स.१९४२ तक की सभी राजकीय घटनाओं का यह विस्तृत अभिलेख है। इस उपन्यास में तीन पीढियों की लम्बी कथावस्तु है। " झूठा-सच" के बादवाला यह एकमात्र महाकाव्यात्मक उपन्यास है। इसमें १९१४ का प्रथम विश्वयुध्द १९१९ का रोलेट अॅक्ट, खिलाफत आंदोलन, स्वदेशी आंदोलन , १९१९ का दिल्ली बम विस्फोट , १९१३ का कॉंग्रेस का लखनऊ अधिवेशन , व्दितीय विश्व युध्द , क्रिप्स योजना , १९४२ का भारत छोडो आंदोलन , आजाद हिन्द सेना की स्थापना , १९४५ के आमचुनाव आदि राजकिय घटनाओं का कलाबध्द [illegible] विवेचन मिलता है।

संक्षेप में कथावस्तु --

पहली पीढी के सेठ रतनलाल अपने भाई के चल बसने पर भाई के दो पुत्र हरलाल और किसनलाल को अपनी ही सन्तानें समझकर अविभाक्त परिवार का पोषण करते है। उम्र की ३२ वी पायदान पर ही उनकी प्रथम पत्नी मर जाती है। घर में जवान बेटी, पोते पोती के रहते हुए दूसरा ब्याह करना उन्हें अच्छा नहीं लगता। अकेले रहते रहते उनका मेलजोल "इंशा" से बढ जाता है। "इंशा" से "रतनी का जन्म होता है। ऐसी हलत में भी सेठ "अमरो" से दूसरी शादी करते है। अमरो "अमर"नामक बेटे को जन्म देकर " फ्लंजी " की महामारी में मर जाती है। सेठजी "इंशा" की लडकी " रतनी " के मामले में

[illegible]

अपने भतीजों से अलग रहते हैं। यह ई.स. १९१४ का प्रथम विश्वयुध्द का काल है। लगातार चार वर्षोंतक भीषण नरसंहार के साथ चलता हुआ युध्द सारी दुनिया में छूतहे रोग और गरीबी को फैलाता है।

इधर अमर १४ वी उम्रसे ही राजनीतिक घटनाओं के प्रति आकर्षित हो जाता है। आचार्य नरेंद्र देव, डॉ. लोहिया आदि नेताओं के आदर्शों को मानता हुआ वह पक्का कांग्रेसी बन जाता है। राजनीति के साथ साथ वह डाक्टरी पढता है, और डाक्टर बन जाता है। इन्हीं दिनों एक साइकिल दुर्घटना में घायल उसके बचपन के अध्यापक धर्मानंद पंडित की बेटी ऊषा के साथ उसका परिचय होता है। यहाँपर उपन्यास की दूसरी पीढी की कथावस्तु शुरु होती है। ऊषा के साथ बढता हुआ परिचय अखिर विवाह में परिणत हो जाता है। इस प्रकार अमर अपनी प्रैक्टिस, परिवार और राजनीतिक घटनाओं में निरंतर सक्रीय रहता है।

दूसरे महायुध्द में सरकारी निति के विरोध में के अपराध में अमर जेल जाता है। उसके पीछे उसका मित्र नरेन्द्र कोहली उसके परिवार को सहारा देता है। जेल से वापस आनेपर अमर देखता है कि उसकी पत्नी ऊषा अपने मित्र के प्रति अधिक झुक गयी है। वह ऊषा पर संशय व्यक्त करता है। ऊषा के मनमें भी अमर को छोड नरेन्द्र के प्रति आकर्षण निर्माण होता है। ऊषा अमर को छोड देती है और अपना आत्मनिर्भर जीवन प्रारंभ कर देती है। इसी बीच किसी दुर्घटना में अमर की मृत्यु हो जाती है। इस प्रकार अमर की कथा समाप्त होती है, और ऊषा की कथा शुरु होती है।

ऊषा अपने बेटे प्रताप को अपने मैके छोड पी.एच.डी. करके आत्म निर्भर बनना चाहती है। राजनीति में वह अपनी रुचि से कार्य करती रहती है। "स्टूंडटस फेडरेशन" की महत्वपूर्ण

सदस्या बनकर वह १९४२ में अंग्रजों के विरोध में भूमिगत आंदोलन शुरू कर देती है। इस समय वह अपने सहयोगी रूद्रदत्त पाठक के साथ रहने के कारण उसके प्रति आकर्षित भी हो जाती है। उसके निकट संपर्क से वह गर्भवती भी बन जाती है, परंतु शारीरिक दुर्बलता के कारण वह अपना गर्भपात करवाती है। १९४५ में देशमें आमचुनाव होते हैं। कांग्रेस मंत्रिमंडल के आनेके कारण उषा पर लगा वॉरंट भी समाप्त हो जाता है। उषा अपने पुत्र और रूद्रदत्त से मिलने बम्बई से लखनऊ आती है। रूद्रदत्त के साथ सिविल मैरेज करनेका भी उसका इरादा होता है, लेकिन अपने पुत्र के भविष्य का ध्यान रखकर वह मैरेज नहीं करती। यहींपर यह तीसरी पीढी की कथा वस्तु समाप्त होती है, और उपन्यास भी समाप्त होता है।

कथावस्तु की शिल्पगत विशेषता --

प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु का कालखंड ४० वर्षों का होने के कारण यशपाल इसमें तीन पीढियों की लम्बी कथा को चित्रित कर सके है।

यशपालने मूल कथा को तत्कालीन राजकीय और सामाजिक परिवेश में चित्रित किया है। यशपाल ने तीन पीढिंयो कीं इस विशाल कथाभूमि में अमर-उषा की मुख्य कथा के साथ, इंशा-रतनलाल, नरेंद्र-उषा, पाठक- उषा, रूद्रदत्त - उषा की प्रासंगिक कथाओंको भी अत्यंत कुशलता से जोडा है। ये प्रासंगिक कथाएँ मूल कथा का विकास करने में सहायक होती है।

कथावस्तु नितांत मौलिक है। राजनैतिक संघर्षों से भरे प्रसंग, प्रेम के प्रसंग, स्वतंत्रता आंदोलन का प्रसंग आदि के यथार्थ वर्णनों के कारण कथावस्तु रोचक बन गयी है।

रिश्वत खोरी, बेरोजगारी, महँगाई जैसी सामाजिक समस्याओं के प्रति तीखा व्यंग्य करके इन समस्याओंको हल करने के उपाय भी प्रस्तुत उपन्यास में विस्तार के साथ आये है।

प्रस्तुत उपन्यास राजकीय पश्र्वभूमिपर चित्रित भारतीय समाज की तीन पीढियों का लेखा है, जिसमें उषा के माध्यम से नारीकी आत्मनिर्भरता, आत्मसंमान, विवाह और प्रम की व्यावहारिकता आदि के यथार्थ चित्रण करके, यशपाल ने मार्क्सवादी सामाजिक प्रतिबध्दता को भली भाँती निभाया है। उपन्यास का प्रमुख स्वर राजनैतिक घटनाओंकी पार्श्वभूमिपर भारतीय स्त्री की सामाजिकता कों चित्रण करना रहा है।

इसी के फल स्वरूप उपन्यास सामाजिक उपन्यासों की कोटिमें आता है।

......

ऐतिहासिक उपन्यास

यशपाल ने "दिव्या और " अमिता" की रचना करके हिन्दी जगत् को यथार्थवादी ऐतिहासिक उपन्यास दिये है। यशपाल ने एतिहासिक पृष्ठभूमिपर अपनी कल्पना के पात्र और घटनाएँ निर्माण करके उनके व्दारा प्रगतिशील विचारोंकी प्रतिष्ठापना की है। आपके उपन्यास ऐतिहासिक घटनाओं एवं प्रसंगोंका भावपूर्ण चित्राण मात्र नही है। ऐतिहासिक वातावरण में कल्पना का सुंदर मिलाफ है।

यशपाल ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासोंके लिए बोध्द काल चुना है, जिस में दासन वर्ग और अभिजात वर्ग का सघर्ष, स्त्री, वेश्या, नर्तकी का भोग्या स्वरूप, अहिंसा धर्म की आचार संहिता आदि बातों का [redacted] यथातथ्य चित्राण किया हुआ मिलता है।

१. दिव्या [१९४५]

प्रस्तावना --

"दिव्या" बोध्दकालीन ऐतिहासिक पटकथा को मार्क्सवादी यथार्थ के कैमरे में बंद करके बनाया हुआ एक ऐतिहासिक लघुपट ही लगता है। यह ऐतिहासिक पृष्ठभूमिपर लिखा वातावरण प्रधान उपन्यास है। " दिव्या" के प्राककथन में स्वयं लेखक ही कहते है, " दिव्या इतिहास नहीं, ऐतिहासिक कल्पना मात्र है। "

संक्षेप में कथावस्तु --

बौध्द काल में मद्र गणराज्य के "सागल" नामक गण की यह कथा है। इसी सागल नगरी में गण-परिषद की ओर से " मधु-पर्व महोत्सव" का आयोजन होता है। इस अवसरपर ब्राहमण कुलोत्पन्न दिव्या को " सरस्वती पुत्री " और दासपुत्र पृथुसेन को "सर्वश्रेष्ठ खड्गधारी" पद से विभूषित किया जाता है। दिव्या गायन और नृत्य-विधा में पारंगत है। दिव्या की शिबिका को कंधा देते समय दास-पुत्र समझकर पृथुसेन को अपमानित किया जाता है, परंतु दिव्या, धर्मस्थ महापंडित देव शर्मा की प्रपौत्री होकर भी पृथुसेन जैसे दास-पुत्र की ओर आकृष्ट होती है।

दिव्या और पृथुसेन सामाजिक बंधनों को ठुकराकर अपने प्रम की प्यास बुझाते रहते है। दिव्या के आत्मसमर्पण के कारण वह गर्भवती भी हो जाती है। इधर दिव्या पर लगाये प्रतिबंध और पृथुसेन पर रखी गयी कडी निगरानी के कारण दोनों भी मिल नहीं पाते। इसी समय पराये गण का राजा केंद्रस सागलपर धावा बोल देता है, और पृथुसेन इसी युध्दपर जाता है। युध्द से लौटने पर पृथुसेन अपने पिता की आज्ञा के अनुसार "सिरो" से शादी करता है। बेचारी गर्भवती दिव्या के जीवन की विकट परिस्थितियाँ यहाँ से प्रारंभ होती है। सामाजिक दूषणों से आक्रांत हो दिव्या पर सागल नगरी छोडने की नौबत आती है।

अपने पेट के गर्भ को पालने के लिए दिव्या दास-व्यापारी प्रतुल, भूधर, पुरोहित चक्रधर जैसे अनेकों की दासी तथा भोग्या बनना पडता है। इस जीवन में उसे अपना दूध अपने बेटे को छोडकर मालिक के बेटे को पिलाना पडता है। जीवन की असहय यातनोओं से त्रस्त दिव्या यमुना में आत्मघात करने निकलती है। वही पर उसे मथुरा की राजनर्तकी रत्नप्रभा बचा लेती है। इस प्रकार दिव्या रत्नप्रभा " नर्तकी के यहाँ "अंशुमाला" के नाम से नर्तकी का जीवन बिताती है।

अंशुमाला के आकर्षण में सभी सामन्तगण और राजपुरुष उसकी सेवा में उपस्थित होते है। अप्रत्याशित रूप से ही दिव्या की सागल के श्रेष्ठ मूर्तिकार "मारीश " और सेनानी "रुद्रधीर" से भेट होती है। दोनो भी दिव्या के प्रेम को दिल से चाहते है। दिव्या "रुद्रधीर" के विवाह-प्रस्ताव को ठुकराती है लेकिन "मारीश" के सिध्दान्तों से पूर्णतया प्रभावित भी हो जाती है। यहीपर उपन्यास की कथावस्तु आवेगपूर्ण हो जाती है।

रुद्रधीर "सागल" का निष्कासित सेनानी था। उसकी अवधि समाप्त होनेपर वह अपने राज्य में आता है, और द्विजों की जगह शूद्रों [पृथुसेन] का ही अधिराज्य देखता है। वह शूद्रों की बढती शक्ति को नष्ट करने के लिए पृथुसेन के विरुध्द एक षड्यंत्र रचता है।

रुद्रधीर जनपद-कल्याणी नर्तिका मल्लिका के सहयोग से नृत्योत्सव का आयोजन करता है। इसी उत्सव में सभी शूद्रवर्गीय निमन्त्रितों को विष पिलाकर मारने का उसका विचार जब पृथुसेन के कानोंपर आता है, तब वह भाग खडा होता है, और बोध्द भिक्षु बन जाता है।

BARR. ... LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR

कल्याणी की पुत्री रुचिरा के देहावसान के बाद वह उत्तराधिकारी की खोज में रत्नप्रभा के यहाँ मथुरा जाती है। वहाँपर धर्मस्य पंडित-पुत्री दिव्या को अंशुमाला के रूप में देखकर वह चकित हो जाती है । वह अपनी उत्तराधिकारीणी के रूप में दिव्या को सागल ले आकर सागल में विशाल महोत्सव का आयोजन करती है।

सागल का समाज ब्राह्मण कुलोत्पन्न दिव्या का सारे समाज की भोग्या बनकर रहना कभी बर्दाश्त नहीं करता। दिव्या को कोई न्याय नहीं देता। आखिर वह फिर एक बार सागल छोडकर चली जाती है। वह समीप की पान्थस्थ-शाला का आश्रय लेती है। दिव्या के पीछे उसकी दीवानी सारी सागल नगरी आती है। सभी पुरुष दिव्या को अपनी बनाने के लिए उसकी आभ्यर्थना करते है।

यहींपर आचार्य रुद्रधीर, भिक्षु पृथुसेन और दार्शनिक मॉरीश उसके समक्ष प्रणय-निवेदन करते है। दिव्या अभिजात वंशीय रुद्रधीर और निवृत्तिमार्गी भिक्षु पृथुसेन को ठुकराकर प्रवृत्तिमार्गी चार्वाक वादी मारिश का आश्रय स्वीकार करती है। यहींपर अत्यंत नाटकीयता से कथानक का अंत होता है।

कथावस्तु की शिल्पगत विशेषता --

"दिव्या" की इतिहासकालीन काल्पनिक कथा व्दारा लेखक ने बौध्दकाल के अभिजात वर्ग व्दारा दासों के शोषण का संवेदनशील

आलेख पाठकों के सामने रखता है। कथा की प्रमुख सूत्रधार "दिव्या ही है। जहाँ भी दिव्या जाती है, वहींपर उपन्यास की प्रमुख कथावस्तु भी जाती है। प्रासंगित कथाओं के रूप में दिव्या-पृथुसेन, दिव्या-रुद्रधीर, दिव्या-मारीश, और दिव्या-रत्नप्रभा की उप कथाओं का समावेश होता है। प्रभावी प्रासंगिक कथाओं के कारण उपन्यास की कथावस्तु वेगवान और असरकारी बन गयी है।

उपन्यास की कथा घटना प्रधान है। पृथुसेन और दिव्या का मिलन, दिव्या का आत्मघात करनेका प्रसंग, दिव्या और मारिश का मिलन आदि कथावस्तु के प्रसंग निश्चय ही रोचक एवं हृदय ग्राही प्रसंग है।

अभिजात वर्ग की ओर से दास वर्ग तथा वेश्या वर्ग पर जो अन्याय उस कालमें होते थे उनका ऐतिहासिक अनुशीलन अत्यंत कालात्मकता से किया हुआ है। लेखक का उद्देश्य ही यही है। ऐतिहासिक प्रसंगोंके रहनेपर भी कथावस्तु में कहीं भी रूखाता नहीं नजर आती।

उपन्यास का अंत अत्यंत नाटकीय, चरमोत्कर्षगामी एवं सुख पर्यवसायी है। कथा के कुशल गठन में लेखक कलात्मकता के सुन्दर दर्शन होते हैं।

२. अमिता [१९५६]

प्रस्तावना --

सम्राट अशोक के कलिंग-विजय की कथा के उपर आधारित यह यशपाल का दूसरा ऐतिहासिक उपन्यास है। अशोक का क्रूर शासक हृदय कलिंग की मनुष्य-हानि देखकर पिघल गया और अशोक अहिंसावादी बौध्द मतानुगामी बना। इसी ऐतिहासीक प्रसंग को प्रस्तुत उपन्यास में अत्यंत मर्मस्पर्शी रूप में उद्घाटित किया है।

संक्षेप में कथावस्तु --

"अमिता" एक छ: साल की बालिका है। सम्राट अशोक के कलिंग आक्रमण का प्रतिकार करने के लिए कलिंग के राजा करवेल जब आपनी सेना सहित युध्दपर निकलते है तब अमिता का जन्म होता है। नवजात शिशु को राज-ज्योतिषी वैभव, संपन्नता तथा सत्ता से विभूषित मानकर उसका नाम "अमिता" रखते है। कलिंग राजा युध्द में घायल होकर मर जाता है लेकिन मरने से पहले अपने राज्य सिंहासन की उत्तराधिकारिणी के रूप में छोटी "अमिता" का नाम घोषित करता है। अमिता इस प्रकार महाराजकुमारी बन जाती है।

महारानी नंदा पति-वियोग के कारण निरीच्छ बनकर बौध्द धर्म की अनुगामिनी बन जाती है। वह अपनी छोटी बेटी अमिता को यह संदेश देती है, "तू सदा बहुजन के हित के लिए, बहुजन के सुख के लिए, बहुजन के परित्राण के लिए यत्न करे। तू किसी से छीनना मत, तू किसी को डराना मत, किसी को मारना मत।"

ये वाक्य ही उपन्यास की कथावस्तु की आधारशीला बन गये है। अमिता को रानी बनाकर महामात्य सुकंठ, महासेनापति भद्रकीर्ति तथा धर्मस्थ आर्य प्रजित राज्य करोबार चलाना शुरु कर देते है।

आत्मनिर्भर कलिंग, फिर अशोक के दुर्दान्त आक्रमण का [illegible] शिकार न बने, इसी विचार से राज्य में आत्म-रक्षा के लिए दुर्ग निर्माण का कार्य चल रहा है। अपनी भूमि छीनी जाने के भय से कलिंग वासी लोग महारानी नंदा को शिकायत करते है। महारानी उन्हें अभयदान देती है।

राज्य की सुरक्षा का प्रश्न आवश्यक मानकर महासेनापति की आज्ञा से लोगों को कोडे लगाकर दुर्ग के लिए भूमि छीनने का कार्य चल रहा है । अवसरवश अमिता वहींपर पहुंच जाती है। अपने कुत्ते बभ्रू को साँकल से बँधवाकर कोडे लगानेवाले धूधप को अपनी पीठपर कोडा मारने की आज्ञा देती है। कोडे की चोट से कराहती हुईं वह ऐसा मनहूस खोल बंद करने की आज्ञा देती है। अपने स्वानुभव के साथ वह कहती है, " यह बहुत बुरा खेल है, तुम दुष्ट हो। तुम दूसरों से छीनते हो, दूसरों को डराते हो, दूसरों को मारते हो। तुम्हें बभ्रू की भाँति बाँधकर दण्ड देंगे। "

पराभूत सम्राट आशोक फिर चोगुना सैनबल लेकर मगधपर आक्रमण कर देता है। कलिंग के महामात्य रानी को दुग-निर्माण का महत्व-बताकर दुर्ग निर्माण की आज्ञा माँगत है लेकिन इहलोक परलोक में निष्ठा रहनेवाली महारानी यह नहीं मान लेती। महारानी के इस व्यवहार से कलिंग देश में अकर्मण्यता और भाग्य निर्भरता फैल जाती है। जब कलिंग देश पर बोध्द धर्म का प्रभाव थी, तब धर्म की आड में सोमित्रा जैसे लोग भी अपना अपना स्वार्थ सिध्द करने मे लिन थे।

अशोक के भावी आक्रमण से देश बच जाए, इसी लिए देवताओं की सहायता पाने के लिए राज्य में " संग्राम बलि यज्ञ " की घोषणा महामान्य करते हैं। महारानी नंदा इस हिंसाचारी कृत्य का निषेध करती है। प्रजा किंकर्तव्यविमूढसी होकर आनेवाल संकट का सामना करने की दुश्चिन्ता में है।

युध्द - तैयारी के अभाव में दूसरे आक्रमण में अशोक की जीत होत है। अशोक के उन्मत्त सैनिक अनगिनत निरपराध लोगों की हत्या करते हुए विजयोन्माद मनाते कलिंग के राजमहल में प्रवेश करते हैं। यह दृश्य देखकर अमिता क्रोधित होती है। वह अशोक को बभ्रूकी भाँति साँकल से बांधना चाहती है। सामने खडे अशोक को ही व अबोधतावश अशोक को बाँधने की आज्ञा देती है। जब उसे मालूम होता है कि उसके सामने अशोक ही खडा है, तब वह उससे पूछती है, " तुम प्रजा से क्यों छिनते हो ? तुम प्रजा को क्यों डराते हो ? प्रजा को क्यो मारते हो ? तुम्हें क्या चाहिए ? अशोक जब राज्यसिंहासन माँगता है तब वह निरीहता से पूछती है, "क्या तुम्हारे पास सिंहासन नहीं है।? अच्छा ले जाओ। हम दूसरा ले लेंगे। व अमिता के इन अबोध और निष्पाप उद्गारों से अशोक का फौलादी मन पिघल जाता है, और वहींपर अपना खड्ग भूमिपर रखता हुआ वह प्रतिज्ञा करता है, "वह किसीसे छीनेगा नहीं, किसी को डराएगा नहीं, किसी को मारेगा नहीं। वह हिंसा और युध्द से विजय की कामना नहीं करेगा। वह कलिंग की विजयी महारानी की भाँति निच्छल प्रेम से सारे संसार के हृदयों को विजय करेगा। " यहींपर उपन्यास का अन्त है।

कथावस्तु की शिल्पगत विशेषता --

"दिव्या" की कथावस्तु की तरह इस उपन्यास की बालिका "अमिता" भी लेखक की कल्पना से अनुस्यूत होकर अशोक के हृदय-परिवर्तन के ऐतिहासिक तथ्य को प्रभावी बनाती है। अमिता की मुख्य कथा के साथ साथ हिता-मोद, हिता-सौमित्र आदि उपकथाएँ मूल उपन्यास के विकास में योगदान देती है। महारानी नंदा और राजकाज से संबंधित अन्य कथा प्रसंग भी उपन्यास की कथावस्तु में संघर्ष के साथ औत्सुक्य की निर्मिती करते है।

"दिव्या" की तरह इस उपन्यास में भी लेखक ने दास-प्रथा की चर्चा छेडी है। हिता और मोद केवल दास होने के कारण एक दूसरेको चाहकर भी मुक्त रूप में प्रेम नहीं कर सकते थे। इसी उदाहरण से लेखकने दास-प्रथा मनुष्य के स्वाभाविक विकास में कैसे घातक है यह सिध्द किया है। "दिव्या" की तरह यहाँपर भी तत्कालीन अभिजात वर्ग की शोषण-परक नीति का चित्रण किया है।

कथावस्तु एक छः वर्षीय बालिका के इशारोंपर नाचती हुई सी चलती है। सम्राट अशोक भी बालिका के ममताभरे अहिंसक सिध्दान्तवादी वाक्य सुनकर अपना हथियार डालकर अहिंसावादी धर्म का स्वीकार करता है। अमिता जैसी अबोध बालिका के कहनेपर अशोक का पिघलना अस्वाभाविक सा लगता है, परंतु अपनी मौलिकता प्रस्थापित करने की धुन में लेखकने किया हुआ यह प्रयत्न सदोष नहीं लगता।

विश्व-शान्ति के महान उद्देश्य से लिखी वह कथा संघर्षमय न होकर भी अपने आपमें पूर्ण है। इसका सुखान्त निश्चय ही पाठकोंकी आत्मा को एक नया संदेश देता है।

४. अनुदित उपन्यास

अनुवाद के क्षेत्र में भी यशपाल ने अपनी सक्षम लेखनी और सर्वगामी प्रतिभा के दर्शन पाठकों को कराये है। अंग्रजी और उर्दू के प्रसिध्द समाजवादी उपन्यासों के आपके अनुवाद अत्यंत सुन्दर बन पडे है। आपके ये उपन्यास मौलिक न होने के कारण हम उनका सिर्फ परिचय-मात्रा करवाने का प्रयास करेंगे न कि कथावस्तु और उनकी शिल्पगत विशेषता। यशपाल ने कुल पाँच उपन्यासोंके हिन्दी में अनुवाद करके स्वयं को एक श्रेष्ठ अनुवादक के रूप में साबित करके रखा है।

१. पक्का कदम [१९४९]

प्रस्तुत कृति लेखक का प्रथम अनुवादित उपन्यास है। प्रसिध्द रूसी लेखक "बर्दी केबांबायेव" के "डिसाइसिव स्टेप" उपन्यास का यह अनुवाद है। रूस के "तुर्कमानिस्तान" के मुक्ति संघर्ष की यह गाथा है। जो इ.स. १९१७ की रूसी क्रान्ति की पृष्ठभूमिपर आधारित है। मूल लेखक की यह एक आपबीती ही है।

यशपाल जब सन १९४८ में राजनीतिक बंदी बनाए गये तब जेल में उन्होंने यह मूल अंग्रजी उपन्यास पढा। स्वयं स्वातंत्र्य सेनानी होने के कारण वे इस उपन्यास से काफी प्रभावित हुओ और "पक्का कदम" को शीर्षक से उन्होंने इस उपन्यास का अनुवाद किया।

१९१७ में साम्राज्यशाही और समाजवादी लाल सेना में संघर्ष निर्माण होता है। इसी वातावरण में " अरतैक" नामक युवक लाल सेना में भर्ती होता है। साम्राज्यशाही की हस्तक ब्रिटिश सेना के विरोध में लडता लडता " अरतैक" शहीद बन जाता है। एक राष्ट्रवादी युवक की समाजवाद को लाने में रखी यह "डिसाइसिव स्टेप" ही है।

२. जनानी डयोढी [१९५५]

"पर्ल बक" का अंग्रजी उपन्यास "पैवेलियन ऑफ वूमन" का यह भाषानुवाद है। अनुवाद के पात्र "आद्रि, और रानी वू " के चित्रण विशेष-सशक्त रूप में हुऐ है। मूल कृति के आशय का उसी क्षमता में अनुवाद करके मूल उपन्यास के सौंदर्य को उसी रूप में कायम रखनेका यशपाल का प्रयत्न अत्यंत सफल एवं स्तुत्य रहा है। अनुवाद की सही पृष्ठी यशपाल ने अपनी ओर से मौलिक वाक्य जोडकर की है। जनानी डयोढी में या मूल " पैवेलियन ऑफ वूमन" को बाद के चेहरे का विवरण का अनुवाद हूब हू लगता है।

३. फसल [१९५६]

रूसी लेखक गलिन निकोल एव के "हार्वेस्ट" नामक कृति का यह अनुवाद है। यह एक साधारण कृति है।

४. चलती में अमृत [१९५७]

कमला मार्कंडेय के अंग्रजी उपन्यास "नेक्टर इन सीव " का यह हिन्दी अनुवाद है। मजदूर संघर्ष, साहब का सहस्यमय जीवन, अकाल की विभीषिका आदि मूल कृति के प्रसंगोका हूब हू अनुवाद किया हुआ है। कहीं भाषानुवाद छायानुवाद तथा शब्दानुवाद का सहारा लिया है। इस अनुवाद की

विशेषता यह रही है कि अनुवाद का मूल "प्रणताव" इस उपन्यास में भी भाँति पाला है।

५. जुलैखा

प्रसिध्द उज़्बेक लेखक " अख्तर मुख्तार" के "जुलैखाँ" नामक मूल उर्दू उपन्यास का किया हुआ यह हिन्दी उर्दू अनुवाद है। यह यशपाल की अंतिम अनूदित कृति है। तुर्कों की अंधी मन्यताएँ धर्म का सनातनाव, अंधविश्वास आदि का मूल के अनुसार आशय को लेकर सही सही अनुवाद किया है। इस अपन्यास में लेखक ने कडे सामाजिक बन्धनों में बध्द रहनेवाली और दासता का विरोध करनेवाली अत्मनिर्भर नारी जुलैखा का समर्थ चित्रण किया है। उसका सामाजिक अन्याय के विरोध मे लडते लडते हुआ बलिदान हमें बहुत कुछ झकझोरकर जाता है। लेखकने अनुवाद करने में पूरी स्वतंत्रता से काम लिया है। इसके कारण कई बार उपन्यास मौलिक सामाजिक उपन्यास ही लगता है।

-- निष्कर्ष --

संक्षेप में यशपाल के संपूर्ण उपन्यास जगत् की कथाओं की सम्यक समीक्षा की जाये तो निम्नलिखित विशेषताएँ नजर आती है ---

१. कथावस्तु के लगभग सभी प्रारंभ और अंत नाटकीय और पाठकोंकी जिज्ञासा को उकसानेवाले दीखा पडते है।
२. अधिकांश उपन्यासों की कथावस्तु राजनीतिक परिवेश की पृष्ठभूमिपर ही विकसित हुई सी दीख पडती है।
३. सभी उपन्यासों में यशपाल ने अपने मार्क्सवादी सामाजिक सिध्दान्तों का प्रचार और प्रतिष्ठापना करना ही कथावस्तु का प्रधान उद्देश्य माना है।

४. "अप्सरा का शाप " छोडकर अन्य सभी उपन्यासों के कथानक मौलिक ही है।

५. बहुतांश कथानकों में "स्त्री" पात्रों को विशेष महत्वपूर्ण स्थान देकर स्त्रियोंकी आत्म निर्भरता , स्वयंपूर्णता, मुक्त यौवन स्वातंत्र्य, तथा विवाह और प्रेम के बारेमें प्रगतिशील दृष्टिकोण आदि का ही चित्रण लेखक का प्रिय विषय रहा है। कहीं कहीं प्रकृत वासनाभरे चित्र भी नजर आते है , जो यशपाल की प्रगतिशील विचारधाराको अतिरंजित बनाते है।

६. कथावस्तु की शैली वर्णनात्मक ही रही है।

७. कथावस्तु में हस्य-विनोद के प्रसंग अत्यल्प है। जैसे से झूठा सच के "जीना-सालगी" के संबंध वर्णन।

८. सभी कथाओंमें हम एक स्त्री के साथ कई पुरुषों के शरीर-संबंध चित्रित किये हुअे पाते है। यशपाल को शायद ऐसे बहु पुरुषी संबंधों में विशेष रस होगा।

९. कथावस्तु में सभी जगह राजनीति, समाज, इतिहास का अत्यंत व्यग्यतासे किया चित्रण पैना बन गया है।

१०. प्राय: सभी उपन्यासों मे मध्यम मध्य वर्गीय पात्रों की कथाओं को ही चुना गया है।

.. ..